साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

WEEKLY KHETI SANDESH

All Subject to Patiala Jurisdiction.

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 27-10-2025 • Vol.1 No.10 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

पंजाब में पराली जलाने के मामलों में चार गुना गिरावट, सख्ती और देरी से कटाई ने दिखाया असर

पंजाब में इस साल पराली जलाने के मामलों में उल्लेखनीय गिरावट दर्ज की गई है। पंजाब प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (PPCB) के आंकड़ों के अनुसार, 15 सितंबर से 21 अक्तूबर के बीच राज्य में कुल 415 खेतों में आग लगाने की घटनाएं दर्ज की गई, जो पिछले साल की समान अवधि में दर्ज 1,510 मामलों की तुलना में लगभग चार गुना कम है। वर्ष 2023 में इसी अवधि में यह संख्या 1,764 थी।

देरी से हुई धान की कटाई भी है एक प्रमुख कारण

विशेषज्ञों का मानना है कि इस बार धान की कटाई में हुई देरी भी इस कमी का एक बड़ा कारण है। अक्तूबर के पहले सप्ताह तक प्रदेश के कई हिस्सों में हुई लगातार बारिश और बाढ़ के कारण कटाई देर से शुरू हुई। पंजाब प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार, इस वर्ष पंजाब में कुल 31.72 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में धान की खेती की गई है, जिसमें से 21 अक्तूबर तक केवल 32.84 प्रतिशत से 33 प्रतिशत क्षेत्र की ही कटाई पूरी हो पाई थी। इसका अर्थ यह है कि लगभग 67 प्रतिशत फसल अभी खेतों में खड़ी है, और आने वाले दिनों में जैसे-जैसे कटाई तेज होगी, पराली जलाने के मामले बढ़ने की आशंका है।

प्रशासन की सख्त कार्रवाई ने निभाई अहम भूमिका

राज्य सरकार और पुलिस प्रशासन ने पराली जलाने की घटनाओं पर अंकुश लगाने के लिए कई ठोस कदम उठाए हैं। पंजाब पुलिस के एक अधिकारी के अनुसार, सतर्क और कड़ी निगरानी तथा प्रयासों के चलते राज्य ने पिछले दो वर्षों

की तुलना में इस साल खेत में आग लगाने की घटनाओं में लगभग चार गुना कमी दर्ज की है। इन प्रयासों के तहत अब तक 189 मामलों में 9.4 लाख रुपये से अधिक का पर्यावरणीय मुआवजा लगाया जा चुका है, जिसमें से 6.25 लाख रुपये की वसूली हो चुकी है। वहीं, अवज्ञा के मामलों में भारतीय न्याय संहिता की धारा 223 के तहत 170 से अधिक एफआईआर दर्ज की गई हैं। सबसे अधिक एफआईआर तरण तारन (61) और अमृतसर (50) में दर्ज की गई हैं।

आने वाले दिनों में चुनौती बना रह सकता है कटाई का बचा हिस्सा

हालांकि अब तक के आंकड़े उत्साहजनक हैं, लेकिन चुनौती बनी हुई है। 11 अक्तूबर को पराली जलाने के कुल मामले 116 थे, जो 21 अक्तूबर तक बढ़कर 415 हो गए। चूंकि राज्य के लुधियाना, बठिंडा, संगरूर और मोगा जैसे बड़े जिलों में अभी कटाई का बहुत बड़ा हिस्सा बाकी है, विशेषज्ञों का मानना है कि गेहूं की रबी फसल की बुवाई के लिए खेत तैयार करने के दबाव में आने वाले दिनों में पराली जलाने के मामले बढ़ सकते हैं। इसलिए, प्रशासन की सतर्कता और किसानों के सहयोग की यह परीक्षा अभी जारी रहने वाली है।

हरियाणा सरकार ने गन्ने का रेट 15 रुपए क्विंटल बढ़ाया

देश में सबसे ज्यादा दाम देने वाला राज्य बना

हरियाणा के गन्ना किसानों को दीपावली पर मीठा उपहार मिला है। हरियाणा सरकार ने गन्ने के दाम में 15 रुपए प्रति क्विंटल की बढ़ोत्तरी कर किसानों को बड़ी राहत दी है। इस निर्णय के साथ हरियाणा एक बार फिर देश में गन्ने का सबसे ऊंचा रेट

देने वाला राज्य बन गया है। सरकार के आदेश के मुताबिक, अगेती किस्म के गन्ने का रेट 400 रुपए से बढ़ाकर 415 रुपए प्रति क्विंटल और पिछेती किस्म का रेट 393 रुपए से बढ़ा कर 408 रुपए प्रति क्विंटल कर दिया गया है। केन्द्र सरकार ने 2025-26 के लिए गन्ने का उचित एवं लाभकारी मूल्य (एफ.आर.पी.) 355 रुपए प्रति क्विंटल तय किया है, जबकि हरियाणा सरकार ने इससे 60 रुपए अधिक रेट तय कर दिया है।

88 लाख टन उत्पादन, 14 चीनी मिलें

हरियाणा में फिलहाल 14 चीनी मिलें चल रही हैं। इनमें 11 सहकारी और 3 निजी क्षेत्र की हैं। पिछले वर्ष राज्य में करीब 88.6 लाख टन गन्ने का उत्पादन हुआ था। अब बढ़े हुए रेट से किसानों को इस सीज़न में बेहतर लाभ की उम्मीद है। सहकारिता मंत्री डॉ. अरविंद शर्माने मिलों को निर्देश दिए हैं कि किसानों के भुगतान में किसी भी तरह की देरी न हो और उत्पादन क्षमता को अधिकतम किया जाए।

हरियाणा के मुख्यमंत्री नायब सैनी ने कहा कि गन्ना किसानों की मेहनत और पसीने का पूरा मूल्य देना सरकार की प्राथमिकता है। सरकार का लक्ष्य है कि हरियाणा के किसान खुशहाल हों, उनका भुगतान समय पर मिले और उन्हें देश में सर्वोत्तम मूल्य प्राप्त हो। किसान का सम्मान सरकार की जिम्मेदारी है। गन्ने का रेट बढ़ने की घोषणा के बाद प्रदेश के किसानों में उत्साह है। राज्य सरकार के इस कदम से हरियाणा की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई मिठास और मज़बूती मिलेगी।

किसानों के हित में जारी

बीजोपचार

अच्छी फसलों का मूल आधार

बीजोपचार के लाभ

- ★ अधिक अंकुरण
- ★ अधिक प्रबल पौधे
- ★ आरंभिक बिमारियों का प्रभावी नियंत्रण
- ★ स्वस्थ पौधों की संख्या ज्यादा

देश के सभी किसान, पढ़ें होकर होशियार

अच्छी पैदावार तभी होगी, जब बीजों का हो सही उपचार

कृषि में सहजन (मोरिंगा) का महत्त्व

नेहा चौहान, पंकज सूद, कविता शर्मा व कल्पना आर्य,
कृषि विज्ञान केंद्र मंडी स्थित सुंदरनगर (हिमाचल प्रदेश)

सहजन, जिसे ग्रामीण भारत में मोरिंगा, सजन या मुंगिया के नाम से भी जाना जाता है, अब केवल पोषण या औषधि तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आधुनिक कृषि प्रणाली में भी अपना विशेष स्थान बना चुका है। इसके बहुपयोगी गुणों के कारण यह खेती, पशुपालन और जैविक उत्पादों की दुनिया में नई संभावनाएं खोल रहा है। इसकी पत्तियां, फली, फूल, जड़, बीज और छाल सभी किसी न किसी रूप में मानव स्वास्थ्य, पशु आहार और कृषि उत्पादन में सहायक हैं। सहजन को 'सुपरफूड' कहा जाता है क्योंकि इसमें सभी आवश्यक पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। इसकी पत्तियों में प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन, पोटाशियम, मैग्नीशियम, जिंक और विटामिन प्रचुर मात्रा में होते है। निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से हम कृषि में मोरिंगा के विस्तृत उपयोग को समझ सकते है :-

1. जैविक खाद और बायोफर्टिलाइजर के रूप में उपयोग

सहजन की पत्तियां, टहनियां और तनों से तैयार किए गए अर्क को जैविक खाद और बायोफर्टिलाइजर के रूप में खेतों में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें नैचुरल सिटोकिनिन जैसे हार्मोनिक तत्व पाए जाते है जो फसलों की कोशिकीय वृद्धि को तेज करते है। पत्तियों से बना अर्क बीजों के अंकुरण (germination), पौधों की जड़ और पत्ती विकास तथा फूल-फल की गुणवत्ता में सुधार लाता है।

सहजन का जैविक अर्क छिड़कने से जैविक उत्पादन को बढ़ावा मिलता है, रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है, तथा मिट्टी की संरचना एवं जैविक गतिविधियां सशक्त होती है। यह समाधान विशेष रूप से उन किसानों के लिए उपयुक्त है जो जैविक प्रमाणन की दिशा में प्रयासरत हैं।

2. प्राकृतिक कीटनाशक के रूप में सहजन

सहजन के पत्तों और बीजों में जीवाणुरोधी, फंगलरोधी एवं कीटरोधी गुण होते है। इसके अर्क में पाय जाने वाले फाइटोकेमिकल्स जैसे फ्लावोनोइड्स, एल्कलॉइड्स और टैनिन्स प्राकृतिक कीटनाशक की तरह कार्य करते है। इससे फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीटों जैसे तना छेदक, सफेद मक्खी, तेला, माइट्स आदि की संख्या में कमी आती है। यह विशेष रूप से फल-सब्जी उत्पादन, धान, दलहन और सब्जी फसलों में उपयोगी साबित हो सकता है, जिससे किसानों को महंगे रासायनिक कीटनाशकों से छुटकारा मिलता है।

3. पशुपालन में चारे और पोषण पूरक के रूप में

सहजन की हरी पत्तियां एवं फली उच्च प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन, फॉस्फोरस और विटामिन्स से भरपूर होती है, जो पशुओं के चारे के रूप में उपयुक्त हैं। इसके प्रमुख लाभ हैं

दूध उत्पादन में वृद्धि : जब गायों और भैंसों को सहजन पत्तियां खिलाई जाती हैं, तो दूध की मात्रा और गुणवत्ता में सुधार देखा गया है।

पशु स्वास्थ्य में सुधार : यह रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाकर पशुओं को संक्रमण और पाचन रोगों से बचाता है।

बकरी, भेड़, सूअर और मुर्गियों के लिए भी लाभकारी : पत्तियां, फली और पाउडर मुर्गियों के आहार में प्रोटीन पूरक के रूप में प्रयोग होती है, जिससे अंडा उत्पादन और मांस की गुणवत्ता बेहतर होती है।

यह एक सस्ती और स्थानीय रूप से उपलब्ध चारा प्रणाली के रूप में किसानों को आर्थिक राहत देता है।

4. एकीकृत खेती प्रणाली

सहजन की खेती को कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन, डेयरी, वर्मी कम्पोस्टिंग आदि के साथ जोड़ा जा सकता है।

5. मिट्टी सुधार एवं जल संरक्षण में सहायक

सहजन की जड़ें गहराई तक जाती है, जिससे यह मिट्टी की जलधारण क्षमता को बेहतर बनाती है, मृदा कटाव रोकने में सहायक होती है, तथा भूमि की भौतिक बनावट को मजबूत करती है। यह पौधा सीमांत और बंजर भूमि में भी आसानी से उग जाता है, जिससे बेकार जमीन को उपयोगी बनाया जा सकता है। इसके साथ ही, यह भूमि की जैव विविधता को भी बढ़ावा देता है।

6. सीमांत भूमि का उत्पादक उपयोग

कम उपजाऊ, खारी या बंजर भूमि पर सहजन की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। इससे उन क्षेत्रों में भी आय का साधन उत्पन्न होता है, जहां सामान्य फसलें नहीं हो पातीं। यह जलवायु परिवर्तन के अनुकूल भी है, क्योंकि यह ऊंचे तापमान, कम वर्षा और सूखे को सहन कर सकता है।

निष्कर्ष

मोरिंगा एक ऐसा बहुपयोगी पौधा है जो केवल आहार नहीं, बल्कि कृषि की समग्र उन्नति का आधार बन सकता है। इसके उपयोग से न केवल उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ती है, बल्कि जैविक खेती, पशुपालन, मिट्टी संरक्षण, और आय संवर्धन जैसे महत्वपूर्ण पक्षों में भी सहायता मिलती है। यदि किसान इसे अपनी कृषि प्रणाली में एक स्थायी संसाधन के रूप में अपनाएं, तो यह आर्थिक रूप से लाभदायक, पर्यावरण के लिए अनुकूल, और समाज के लिए पोषणदायक सिद्ध होगा।

किसान भाई करें

मटर की इन किस्मों की बुवाई, मुनाफा ही मुनाफा

शीतकालीन सब्ज़ियों मे मटर का स्थान प्रमुख है। रबी सीज़न में दलहनी फसलों में मटर का प्रमुख स्थान है। इसकी खेती हरी फल्ली (सब्ज़ी), साबुत मटर एवं दाल के लिए किया जाता है। मटर की खेती सब्ज़ी और दाल के लिए उगाई जाती है। मटर दाल की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पीले मटर का उत्पादन करना अति महत्वपूर्ण है, जिसका प्रयोग दाल, बेसन एवं चने के रूप में अधिक किया जाता है। आजकल मटर की डिब्बा बंदी भी काफी लोकप्रिय है। इसमें प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फास्फोरस, रेशा, पोटाशियम एवं विटामिन्स पाया जाता है। देश भर मे इसकी खेती व्यावसायिक रूप से की जाती है।

जलवायु : मटर की फसल के लिए नम और ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। अत: हमारे देश में अधिकांश स्थानों पर मटर की फसल रबी की ऋतु में उगाई जाती है। इसकी बीज अंकुरण के लिए औसत 22 डिग्री सैल्सियस एवं अच्छी वृद्धि व विकास के लिए 10-18 डिग्री सैल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। यदि फलियों के निर्माण के समय गर्म या शुष्क मौसम हो जाए, तो मटर के गुणों एवं उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उन सभी स्थानों पर जहां वार्षिक वर्षा 60-80 सैंटीमीटर तक होती है, मटर की फसल सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। मटर के वृद्धि काल में अधिक वर्षा का होना अत्यंत हानिकारक होता है।

खेत की तैयारी : खरीफ फसल की कटाई के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करनी चाहिए। इसके बाद 2 से 3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। हर जुताई के बाद खेत में पाटा चलाएं, ताकि ढेले टूट कर भूमि में नमी का संरक्षण होता रहे।

बीज की मात्रा : मटर की अगेती किस्मों की बुवाई के लिए लगभग 100 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। इसके अलावा मध्यम और पछेती किस्मों के लिए लगभग 80 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर लगते है। ध्यान रहे कि बीज प्रमाणित और उपचारित होना चाहिए।

बुवाई : देशी हल या सीड ड्रिल से बुवाई करने के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सैंटीमीटर रखनी चाहिए। इसके अलावा पौधे से पौधे की दूरी 5 से 7 सैंटीमीटर रखनी चाहिए। बीज की गहराई 4 से 7 सैंटीमीटर होनी चाहिए।

क्षेत्र के अनुसार मटर की उन्नत किस्में :

उत्तर प्रदेश : किसान मालवीय मटर (एच.यू.डी.पी.-15), आई.पी.एफ.-4-9, स्वाती (के.पी.एफ.डी.-24), विकास, सपना और के.पी.एम.आर.-1441 आदि किस्मों का चुनाव कर सकते है।

पंजाब : इस राज्य के किसान पंत मटर-42, जय (के.पी.एम.आर.-522), के.एफ.पी.-103, उत्तरा (एच.एफ.पी.-8909) आदि किस्मों की बुवाई कर सकते है।

हरियाणा : किसान हरीयाल (एच.एफ.पी.-9907बी), उत्तरा (एच.एफ.पी.-8909), अलंकार, जयंती (एच.एफ.पी.-8712), डी.डी.आर.-27 (पूसा पन्ना) और आई.पी.एफ.-5-19 आदि किस्मों का चुनाव कर सकते है।

मध्य प्रदेश : यहां के किसान विकास (आई.पी.एफ.डी.-99-13) और प्रकाश (आई.पी.एफ.डी.-1-10) किस्मों का चुनाव कर सकते है।

गुजरात : यहां के किसानों के लिए आई.पी.एफ.डी.-10-12, जे.पी.-885, इन्द्रा और प्रकाश आदि किस्में प्रमुख है।

बिहार : इस राज्य के किसानों को डी.आर.- 23 (पूसा प्रभात) और वी.एल. मटर-42 आदि किस्मों की बुवाई करना चाहिए।

महाराष्ट्र : इस राज्य के किसानों के लिए जे.पी.-885, अंबिका, इंद्रा (के.पी.एम.आर.-400), आदर्श (आई.पी.एफ.-99-25) आदि किस्में उपयुक्त मानी जाती हैं।

राजस्थान : मटर की खेती के लिए इस राज्य के किसान डी.एम.आर.-7 (अलंकार) और पंत मटर-42 आदि किस्मों की बुवाई कर सकते हैं।

सिंचाई प्रबंधन : मिट्टी में उपलब्ध नमी और शरद् कालीन वर्षा के आधार पर फसल को 2 से 3 सिंचाई की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई 45 दिन पर करनी चाहिए, तो वहीं दूसरी सिंचाई आवश्यकता पड़ने पर फली भरते समय करना चाहिए।

पैदावार : अगर उपयुक्त तकनीक से मटर की खेती की जाए, तो पकी हुई अवस्था में लगभग 18 से 35 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इसके अलावा हरी फलियों की लगभग 90 से 150 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

दिल्ली में प्रदूषण नियंत्रण

कृत्रिम बारिश योजना में खाद्य संकट के जोखिम

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक अनुसंधान
भारतीय कृषि अनुसंधान
संस्थान, नई दिल्ली
मो. 9416801607

दिल्ली एनसीआर में प्रदूषण कम करने के लिए कृत्रिम बारिश करवाने की योजना जहां फसलों व खेती के लिए नुकसानदेह है वहीं इसके नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों की भी आशंका कम नहीं। इसमें खाद्य सुरक्षा के लिए भी जोखिम है। अव्यावहारिक योजनाओं के बजाय प्रदूषण नियंत्रण के वैज्ञानिक समाधान अपनाने चाहिए।

दिवाली उत्सव पर प्रति वर्ष की जाने वाली आतिशबाजी से गंभीर वायु प्रदूषण उत्पन्न होता है। इसे कम करने के लिए इस साल दिल्ली सरकार ने कृत्रिम बारिश के जरिये मौसम का मिजाज बदलने की योजना बनाई है, जिससे खरीफ फसलों की कटाई-गहाई और रबी की बुवाई पर असर पड़ने की आशंका है, जो राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा के लिए भी गंभीर खतरा साबित हो सकती है।

पिछले छह दशक से देश की खाद्य सुरक्षा और सार्वजनिक खाद्य वितरण प्रणाली को सुनिश्चित करने के लिए केंद्र सरकार किसानों से धान और गेहूं खरीदती है, जिसमें लगभग 80 प्रतिशत योगदान राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के आसपास के राज्यों का रहा है, जहां अभी अक्तूबर-नवंबर महीने में खरीफ फसलों - धान, ज्वार, बाजरा, मूंग, अरहर, कपास आदि की कटाई-गहाई और रबी फसलों - गेहूं, जौ, चना, सरसों, मसूर, आलू आदि की बुवाई चल रही है, जिसके लिए बिना बारिश वाला सूखा मौसम अति आवश्यक है।

निस्संदेह, जब किसान खरीफ फसलों की उपज समेटने और रबी की बुवाई में व्यस्त है और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के आसपास के राज्यों की कृषि उपज विपणन मंडियां अनाज से भरी हुई है, तब दिल्ली सरकार द्वारा कृत्रिम बारिश करवाने की योजना अव्यावहारिक है, जिससे किसान का नुकसान भी हो सकता है। ऐसे समय की जाने वाली कृत्रिम बारिश के चलते किसानों की खरीफ फसल उपज और मंडियों में अनाज की बर्बादी तथा बुआई की गई फसलों के खराब होने की संभावना रहेगी।

उल्लेखनीय है कि सामान्य प्राकृतिक वर्षा तब होती है जब सूरज की गर्मी से नम हवा गर्म और हल्की होकर ऊपर उठती है। ऊपर उठी हुई हवा का दबाव कम हो जाता है और आसमान में एक ऊंचाई पर पहुंचने के बाद वह ठंडी हो जाती है। जब इस हवा में सघनता बढ़ जाती है तो वर्षा की बूंदें बड़ी होकर हवा में देर तक नहीं ठहर पाती और बारिश के रूप में नीचे गिरने लगती हैं। लेकिन कृत्रिम वर्षा करने के लिए सिल्वर आयोडाइड और सूखी बर्फ जैसे ठंडा करने वाले रसायनों का प्रयोग करके कृत्रिम बादल बना कर वर्षा करवाई जाती है।

मानव-निर्मित गतिविधियों के जरिये कृत्रिम बादल बनाने और फिर उनसे वर्षा कराने की क्रिया को 'क्लाउड सीडिंग' कहा जाता है। हालांकि, क्लाउड सीडिंग के कई फायदे हैं, लेकिन मौसम परिवर्तन की यह तकनीक पूरी तरह सुरक्षित नहीं है। इसके नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों में जल और वायु प्रदूषण, पारिस्थितिक तंत्र का विघटन, असामान्य मौसम परिवर्तन और मिट्टी व पानी में रसायनों का जमाव शामिल है। इसके उपयोग से सिल्वर आयोडाइड जैसे हानिकारक रसायन हवा, पानी और मिट्टी में मिल सकते हैं, जिससे स्वास्थ्य जोखिम उत्पन्न हो सकते हैं, और पड़ोसी क्षेत्रों में वर्षा में कमी या अत्यधिक वर्षा व बाढ़ जैसे दुष्प्रभाव भी हो सकते हैं। कृत्रिम वर्षा से प्राकृतिक मौसम

चक्र बाधित हो सकता है, जिससे अप्रत्याशित सूखा या अति वर्षा की स्थिति बन सकती है और किसानों व पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक असर पड़ सकता है। मौसम के संतुलन में बदलाव के दीर्घकालिक अवांछित प्रभाव हो सकते हैं, जिन्हें अभी मौसम वैज्ञानिक पूरी तरह समझ नहीं पाए।

राजधानी क्षेत्र में वायु प्रदूषण लगभग पूरे वर्ष बना रहता है, लेकिन सर्दी के महीनों (अक्तूबर-मार्च) में मानसून की वापसी से वायु गति और तापमान कम होने के कारण पृथ्वी की सतह पर वायु प्रदूषण का घनत्व बढ़ जाता है। पराली जलाने के अलावा, दिल्ली के वायु प्रदूषण के लिए अन्य कारक - वाहनों से निकलने वाला धुआं, औद्योगिक उत्सर्जन, निर्माण कार्य से उठने वाली धूल आदि मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। प्रदूषण में पराली जलाने की महीनेवार हिस्सेदारी अलग-अलग होती है। नवंबर में यह लगभग 30 प्रतिशत और बाकी महीनों में मात्र 0-5 प्रतिशत तक सीमित रहती है। अतः वायु प्रदूषण के लिए वाहन, उद्योग और निर्माण कार्य जैसे स्थानीय कारक अधिक जिम्मेदार हो सकते हैं।

उल्लेखनीय है कि इस वर्ष सर्वोच्च अदालत ने पराली जलाने से रोकने के लिए किसानों को जेल और भारी जुर्माना लगाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों को सख्त निर्देश जारी किए हैं। जबकि दिल्ली सरकार की मांग के अनुरूप दिल्लीवासियों को दिवाली पर पटाखे जलाने की अनुमति देना वायु प्रदूषण रोकने की सरकारी नीति में विरोधाभास प्रतीत होता है।

निस्संदेह, वायु प्रदूषण पर्यावरण और मानव जीवन के स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा है, लेकिन वायु प्रदूषण रोकथाम के अब तक के सरकारी प्रयास कम व्यावहारिक और नाकाफी साबित हुए हैं। इसी कड़ी में दिल्ली सरकार की कृत्रिम बारिश की योजना अव्यावहारिक ही नहीं, बल्कि देश की कृषि और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा हो सकती है। राजधानी क्षेत्र में वायु प्रदूषण नियंत्रण हेतु कोरे प्रचार पर सरकारी धन की बर्बादी करने वाली योजनाओं के बजाय सरकार को वैज्ञानिक समाधान अपनाने की आवश्यकता है - जैसे कंबाइन हार्वेस्टर पर 'स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम' अनिवार्य करना ताकि पराली खेत में दबाकर जैविक खाद बनाई जा सके, और वाहन तथा उद्योगों के प्रदूषण को प्रभावी रूप से नियंत्रित करना।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9—ए, अजीत नगर,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 98151—04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला—147001
(पंजाब)
मो. 90410—14575

वर्ष : 01 अंक : 10
तिथि : 27-10-2025

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at **Drishti Printers,**
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

फास्फोरस की कमी के प्रकार, लक्षण एवं उपचार

पशुओं के लिए संतुलित आहार पद्धति

पशुओं के शरीर में खनिज पदार्थों की विशेष महत्वपूर्णता है। उनकी कमी से पशुओं में विभिन्न प्रकार की बीमारियां / कमियां हो जाती हैं। उनमें से एक विशेष खनिज पदार्थ है फास्फोरस। कैल्शियम के बाद यह शरीर में सबसे ज्यादा मात्रा में पाया जाने वाला खनिज होता है। पशुओं के शरीर में फास्फोरस की अपर्याप्त मात्रा और शरीर द्वारा सही रूप से प्रयोग ना होने पर पशुओं में फास्फोरस की कमी हो जाती है। कुल फास्फोरस का लगभग 85 प्रतिशत हिस्सा हड्डी और दांत की संरचना बनाने के लिए कैल्शियम के साथ उपयोग होता है। फास्फोरस शरीर की कोशिकाओं के केन्द्रक एवं सभी ऊत्तकों के कोशिका द्रव्य की संरचना का महत्वपूर्ण तत्व हैं। यह कंकाल तंत्र, तंत्रिकातंत्र एवं मांसपेशियों के ऊत्तकों का एक सार्वभौमिक तत्व है। रूधिरसीरभ में फास्फोरस की कमी से होने वाली कमी को हाइपोफॉस्फेटीमिया कहा जाता है। बछड़ा/बछड़ी में फास्फोरस की अत्याधिक कमी के कारण रिकेट्स और गाय/भैंस में ऑस्टियोपोरोसिस हो सकता है।

फास्फोरस की कमी के कारण :

1. खाद्य पदार्थों में फास्फोरस की कमी।
2. शरीर द्वारा फास्फोरस का अपर्याप्त अवशोषण।

(क) फास्फोरस का दूध के साथ अधिक मात्रा में निकल जाना।

(ख) गर्भावस्था के दौरान भ्रूण के विकास के लिए फास्फोरस का अधिक प्रयोग होना।

फास्फोरस की कमी के प्रकार : फास्फोरस की कमी तीन प्रकार की हो सकती है, जोकि निम्नलिखित है :

1. जीर्ण/पुरानी फास्फोरस की कमी : आमतौर पर पशुओं में लंबे समय तक अपर्याप्त मात्रा में चारा लेने से जीर्ण/पुरानी फास्फोरस की कमी उत्पन्न होती है और यह अधिकतर शुष्क क्षेत्र में चरने वाले पशुओं में पाई जाती है, क्योंकि इन स्थानों की मिट्टी में स्वाभाविक रूप से फास्फोरस कम मात्रा में पाया जाता है।

2. तीव्र फास्फोरस की कमी : यह उच्च उत्पादन वाले दुधारू पशुओं में स्तनपान की शुरूआती अवधि में अधिकतम पाई जाती है, क्योंकि स्तनपान के साथ फास्फोरस अधिक मात्रा में निकल जाता है। प्रसव के समय के आस-पास पशु के आहार/चारा सेवन में कमी आना, फास्फोरस की कमी का एक बड़ा कारण माना जाता है।

3. अन्य : फास्फोरस की कमी ओरल एवं पेरेन्ट्र कार्बोहाइड्रेट देने के पश्चात् कोशिकाओं द्वारा फास्फोरस के ग्लूकोज़ के साथ अधिक मात्रा में उपयोग की वजह के कारण फास्फोरस की कमी उत्पन्न हो जाती है।

लक्षण : फास्फोरस की कमी से ग्रसित युवा पशुओं में :

1. उत्सुकता व बेचैनी।
2. मांसपेशियों में कमज़ोरी एवं हड्डियों में दर्द होना।
3. लाल रूधिरकणिकाओं का अधिक संख्या में टूटने लगना।
4. हृदय गति एवं श्वास दर का बढ़ना।
5. एटीपी की कमी के कारण श्वेत रक्त कणिकाओं एवं प्लेट्लेट्स के कार्य में शिथिलता आना।
6. हाइपोफास्फेटीमिया के कारण दुधारू पशुओं में प्रसव के पश्चात् पैरों पर खड़ा ना हो पाना।
7. बच्चों में रिकेट्स।
8. युवा पशुओं में ओस्टो-मलासिए।
9. पाड़का।

डाउनपगाय सिंड्रोम : यह पशुओं में लंबे समय तक फास्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम या पोटाशियम की कमी के कारण होती है। इस स्थिति में पशु कैल्शियम लवण से उपचार के उपरांत भी खड़ा नहीं होता।

उपचार : पशु चिकित्सक द्वारा फास्फोरस की कमी से ग्रसित पशुओं की चिकित्सा निम्न प्रकार से की जा सकती है :

1. पहले दिन सोडियम एसिड फॉस्फेट अथवा वफर फास्फोरस का 50 मिलीग्राम इंजेक्शन तथा दो-तीन दिन बाद 25 मिलीग्राम का दूसरा इंजेक्शन। यह इलाज अत्याधिक प्रभावी होता है।
2. खून की कमी की स्थिति में खून चढ़ाएं तथा मिनरल खनिज मिश्रण 25-50 ग्राम मात्रा में रोज़ पशु को खिलाएं।

रोकथाम :

1. पशुओं को संतुलित मात्रा में फास्फोरस उपलब्ध करवाएं।
2. मृदा में फास्फोरस की कमी को दूर करने के लिए फास्फोरस युक्त उर्वरक डालें।
3. गर्भावस्था के अन्तिम सप्ताह के दौरान आहार में अधिक मात्रा में फास्फोरस ना दें। यह पशु के लिए प्राणघातक हो सकता है।
4. ठंड के मौसम में, अग्रिम गर्भावस्था वाले पशुओं को ठंड से बचाएं।

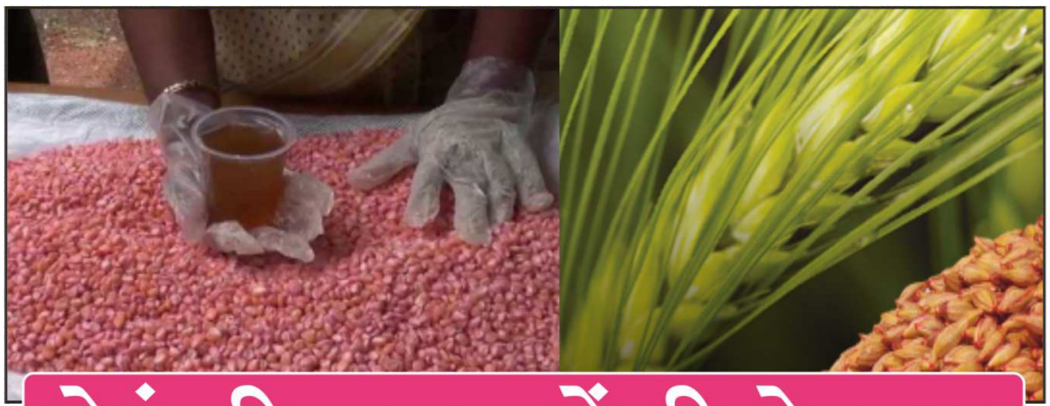

गेहूं की फसल में बीजोपचार व खरपतवार नियंत्रण

खाद्यान्न फसलों में गेहूं का प्रमुख स्थान है। गेहूं की नई-नई किस्मों के चयन, संतुलित खादों व पानी के समुचित प्रयोग से गेहूं की पैदावार में निरंतर बढ़ोत्तरी हुई है तथा कृषि की उन्नत तकनीकों को अपना कर किसानों ने पिछले तीन-चार वर्षों में गेहूं का रिकॉर्ड उत्पादन किया है। परन्तु कुछ ऐसे बिन्दु हैं, जिन पर यदि किसान समय पर ध्यान दें, तो इस उत्पादन में किसान और अधिक बढ़ोत्तरी प्राप्त कर सकते हैं। कृषि विभाग व कृषि विश्वविद्यालय समय-समय पर किसानों को बीजोपचार व खरपतवार नियंत्रण के विषय में जानकारी उपलब्ध करवाते हैं। यद्यपि किसान इस जानकारी अनुसार कृषि कार्य करते भी हैं, लेकिन कुछ कमियां छोड़ देते हैं और हमें अपेक्षित परिणाम नहीं मिलते हैं।

1. बीजोपचार : गेहूं की फसल में बहुत सी ऐसी बीमारियां लगती है, जिनकी रोकथाम केवल बीजोपचार से ही संभव है। किसान बीज उपचार करते भी है, लेकिन बुवाई के दौरान समय की कमी के कारण सही ढंग से बीज उपचार नहीं करते। इससे बीज उपचार होने वाला खर्च भी हो जाता है और वांछित परिणाम नहीं मिलते।

(अ) गेहूं में दीमक से बचाव के लिए 40 किलोग्राम बीज को 60 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. या 100 मिलीलीटर फास्मोथियान 25 ई.सी. दवा से उपचारित करें। इन कीटनाशकों में से किसी एक को पानी में मिला कर 2 लीटर घोल बना लें। बीज को पक्के फर्श पर या पोलीथीन शीट पर एकसार बिछा लें और इस दो लीटर घोल को बीज के ऊपर छिड़क दें और बीज को हिला दें। किसान भाई घोल को बराबर रूप से छिड़कने के लिए यदि स्प्रे पम्प का प्रयोग करें, तो घोल सभी दानों पर समान रूप से लगेगा और हाथ से छिड़काव की बजाये घोल ज़मीन पर या पोलीथीन शीट में नीचे बह कर बेकार नहीं जाएगा। इसके बाद उपचारित बीज को रात भर सूखने दें। तद्पश्चात् उपचारित बीज को फफूंदजनक रोगों से बचाने के लिए फफूंदनाशियों से उपचारित करें।

(ब) खुली कंगियारी (लूज स्मट) व पत्तों की कंगियारी की रोकथाम के लिए उपर्युक्त उपचारित बीज को वीटावैक्स या बाविस्टिन 2 ग्राम या टैब्यूकोनाजोल (रैक्सिल 2 डी.एस.) 1 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से सूखा उपचार करें।

(स) करनाल बंट रोग की रोकथाम के लिए कीटनाशी दवा द्वारा उपचारित बीज को थीराम 2 ग्राम या टैब्यूकोनाजोल (रैक्सिल 2 डी.एस.) 1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।

2. खरपतवार नियंत्रण : खरपतवार किसी भी फसल के उत्पादन में कमी का मुख्य कारक है। गेहूं की फसल में कई प्रकार के खरपतवार जैसे कनकी (गुल्ली डण्डा), पोआ घास, पीतपापड़ा, कंटीली, जंगली पालक, जंगली जई, बाथू, कंडाई हिरणखुरी आदि मुख्य तौर पर नुकसान पहुंचाते है। किसान यदि खरपतवारों का सही नियंत्रण करना चाहते है, तो गेहूं की समय पर बुवाई अवश्य करें तथा सिफारिश किए गए खरपतवारनाशकों का खरपतवार की बताई गई अवस्था पर ही छिड़काव करें।

गेहूं में पाए जाने वाले खरपतवारों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में बांटा गया है :

(क) चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार : बाथू, जंगली पालक, मोथा, हिरणखुरी, कृष्णनील, पीतपापड़ा, चटरी-मटरी, मालवा, प्याजी, कंडाई।

नियंत्रण :

1. निराई-गुड़ाई : खेत में नमी संरक्षण व खरपतवार नियंत्रण के लिए पहली सिंचाई के बाद खुरपे या कसोले से एक या दो गुड़ाईयां करनी चाहिए। इस कार्य के लिए व्हील हो ब्लेड का प्रयोग भी किया जा सकता है। इस विधि द्वारा केवल चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का ही नियंत्रण किया जा सकता है। संकरी पत्ती व घास जाति के खरपतवारों के लिए रसायनों का प्रयोग करना उचित रहता है।

2. चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम के लिए 250 ग्राम 2,4-डी सोडियम साल्ट (80 प्रतिशत) या 300 मिलीलीटर 2,4-डी एस्टर (34.6 प्रतिशत) या 8 ग्राम मैटसल्फ्यूरॉन (एलग्रिप या एल्ली) या 20 ग्राम एफीनिटी को 200-250 लीटर पानी में घोल कर गेहूं बुवाई के 30-35 दिन बाद प्रति एकड़ छिड़काव करें।

(ख) संकरी पत्ती वाले या घास जाति के खरपतवार : जिन खेतों में जंगली जई व कनकी (गुल्ली डंडा) का अधिक प्रकोप हो, वहां यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण कारगर नहीं है, क्योंकि ये खरपतवार गेहूं के पौधों से मिलते-जुलते हैं। इसलिए रसायनों द्वारा ही इनका नियंत्रण करना चाहिए।

* जिन क्षेत्रों में कनकी में आईसोप्रोटोयूरॉन के विरुद्ध प्रतिरोधकता नहीं आई है, वहां कनकी तथा जंगली जई की रोकथाम के लिए मेथाबेंजथायजुरान 70 प्रतिशत घु.पा. 800 ग्राम या मेटाजुरान 80 प्रतिशत घु.पा. 800 ग्राम या आईसोप्रोटोयूरॉन 75 प्रतिशत घु.पा. 500 ग्राम का प्रति एकड़ बुवाई के 30-35 दिन बाद 250 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

* धान-गेहूं फसल-चक्र वाले क्षेत्रों में जहां कनकी में आईसोप्रोटोयूरॉन के प्रति प्रतिरोधकता आ गई है, वहां कनकी व जंगली जई की रोकथाम के लिए पीनाक्साडैन 5 प्रतिशत ई.सी. 100 मिलीलीटर या क्लोडीनोफॉप 15 प्रतिशत घु.पा. 160 ग्राम या सल्फोसल्फयूरॉन 75 प्रतिशत घु. पा. 13 ग्राम 500 मिलीलीटर सहायक पदार्थ या फीनोक्साप्रोप 400 ग्राम 200 ग्राम सहायक पदार्थ या ट्रैलकोक्सीडीन 10 प्रतिशत ई. सी. 1400 मिलीलीटर प्रति एकड़ बुवाई के 30-35 दिन बाद 250 लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।

(ग) मिश्रित (चौड़ी व संकरी पत्ती) खरपतवार :

* गेहूं में मिले-जुले खरपवतारों के नियंत्रण विशेष कर बिना आईसोप्रोटोयूरॉन प्रतिरोधकता क्षेत्रों में आईसोप्रोटोयूरॉन 75 प्रतिशत घु. पा. 300 ग्राम 2,4-डी एस्टर 100 मिलीलीटर प्रति एकड़ की दर से बुवाई के 30-35 दिन बाद 250 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

* कनकी प्रतिरोधकता क्षेत्रों में मिश्रित खरपतवारों में नियंत्रण के लिए पीनोक्साडैन या क्लोडीनोफॉप या फीनोक्साप्रोप की उपरोक्त मात्रा का बुवाई के 30-35 दिन बाद छिड़काव करें तथा इसके एक सप्ताह बाद 2,4-डी या मैटसल्फयूरॉन 8 ग्राम मात्रा का पानी में घोल बना कर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इन खेतों में मक्का, ज्वार आदि की फसल ना लें।

* मिले-जुले खरपतवारों का आईसोप्रोटोयूरॉन प्रतिरोधकता वाले क्षेत्रों में टोटल (सल्फोसल्फयूरॉन + मैटसल्फयूरॉन) का 16 ग्राम प्रति एकड़ की दर से बुवाई के 30-35 दिन बाद 250 लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें। इन खेतों में मक्का, ज्वार आदि की फसल ना लें।

* मिश्रित खरपतवारों का विशेष कर आईसोप्रोटोयूरॉन प्रतिरोधकता वाले क्षेत्रों में नियंत्रण हेतु एटलांटिस (मिजोसल्फयूरॉन, ओयडो सल्फयूरान) 160 ग्राम प्रति एकड़ को 250 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें। ऐसे खेतों में भी ज्वार व मक्का की फसल ना उगाएं।

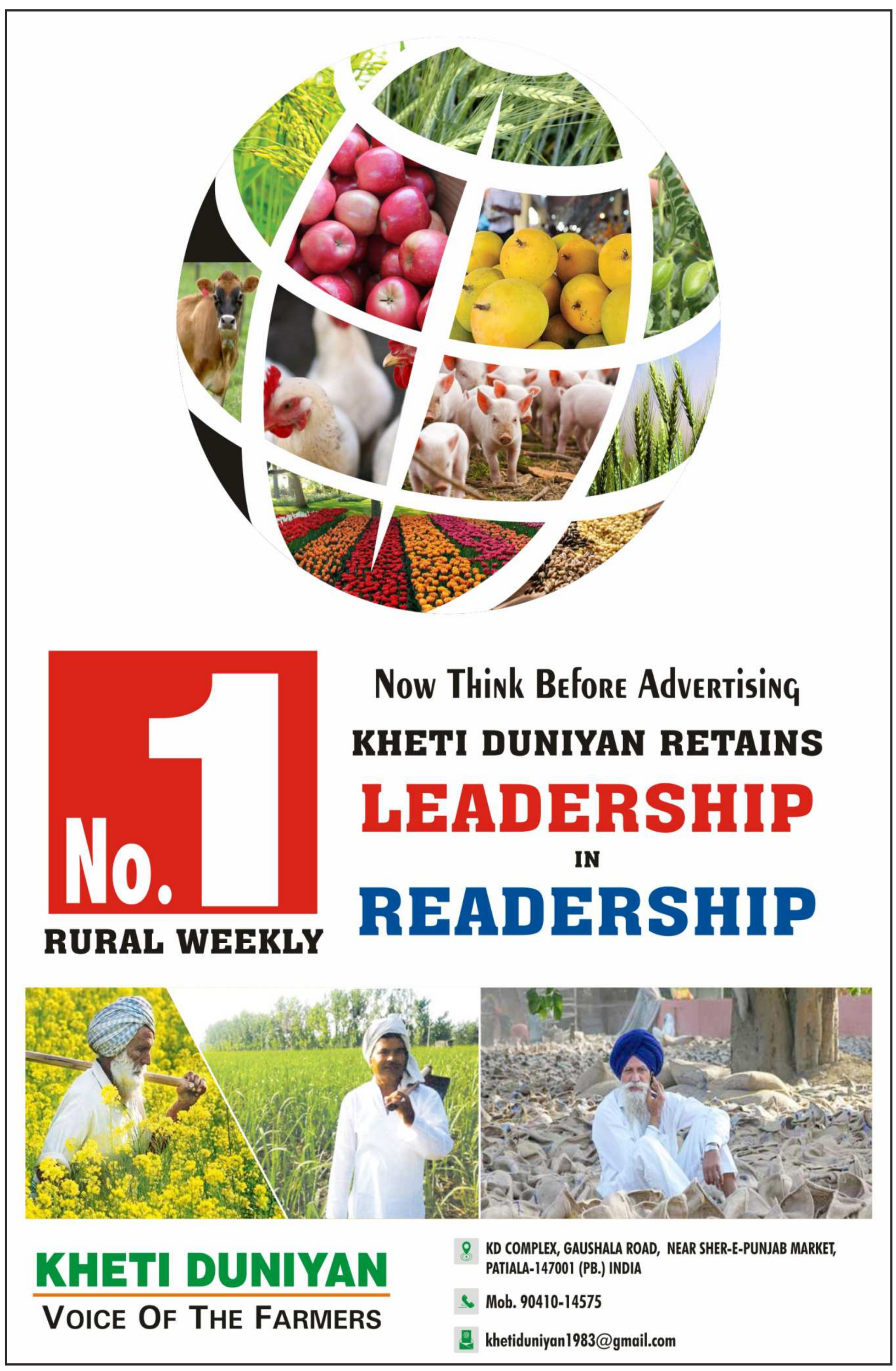

अंकुरित अलसी में पोषण और औषधीय गुण

अलसी एक फूल वाला औषधीय गुणों से भरपूर पौधा है। विभिन्न किस्मों और विभिन्न कृषि स्थितियों के कारण अलसी के बीज का आकार, रंग एवं रूप अलग-अलग होता है। पोषण से भरपूर अलसी के बीज शरीर को महत्वपूर्ण पोषक तत्व प्रदान देने के साथ ही शरीर को कई गंभीर बीमारियों से भी दूर रखते है। अलसी के बीज ओमेगा 3 फैटी एसिड एवं फाइबर का मुख्य स्त्रोत है। इसके अलावा अलसी विटामिन सी, ई, के, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, आयरन, फास्फोरस, पोटाशियम, जिंक जैसे विटामिन और खनिज पदार्थ से भी भरपूर होते है। क्या आप जानते है कि अलसी के बीज खाने की तुलना में अंकुरित अलसी का सेवन अधिक लाभकारी होता है। जी हां, आपने बिल्कुल सही पढ़ा। सामान्य अलसी की तुलना में अंकुरित अलसी के बीज ज्यादा फायदेमंद होते है। जब आप अंकुरित अलसी के बीज का सेवन करते है, तो इसका पोषण और भी ज्यादा बढ़ जाता है। जब बीजों को अंकुरित किया जाता है, तो अंकुरण की प्रक्रिया के दौरान बीजों में मौजूद विटामिन और लिग्नांस के उत्पादन को बढ़ावा मिलता है। साथ ही अंकुरित अलसी के बीज में पचास प्रतिशत से ज्यादा जैव प्रोटीन भी मौजूद होते है। अंकुरित अलसी का सेवन करने से पाचन एवं पोषक तत्वों का अवशोषण भी बेहतर होता है। अंकुरित अलसी के बीज को आप सीधे तौर पर खा सकते है और कई स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर सकते है। जानते है अंकुरित अलसी खाने के फायदे।

अंकुरित अलसी के फायदे

1. हार्मोन का संतुलन करना : अंकुरित अलसी के बीजों का सेवन हार्मोनल स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है। अंकुरित अलसी का सेवन करने से शरीर में लिग्नान (पौधों में पाया जाने वाला पदार्थ जिसमें एस्ट्रोजेनिक एवं एंटीकैंसर गुण होते है) को बढ़ावा देने में मदद मिलती है। अलसी में अनाज, फलियां, फल और सब्जियों की तुलना में लगभग 75-800 गुना अधिक लिग्नांस होता है। यह हार्मोन्स शरीर में संतुलन को बनाए रखने में मदद करता है। लिग्नांस शरीर में एस्ट्रोजन के प्रभाव को कम करता है, जिसके परिणामस्वरूप कैंसर संबंधित संभावना को कम करने में भी मदद करता है। तो, इन तमाम फायदे के लिए आपको अंकुरित अलसी के बीजों का सेवन करना चाहिए।

2. चयापचय दर को बढ़ाते है अंकुरित अलसी के बीज : अंकुरित अलसी के बीजों का सेवन हमारे शरीर में चयापचय दर को बढ़ाता है तथा पाचन क्रिया को बेहतर बनाता है। अलसी के बीज में प्रचुर मात्रा में फाइबर पाया जाता है। अंकुरित अलसी के बीज बेहतर तरीके से पच जाते है। फाइबर युक्त अंकुरित अलसी भूख को नियंत्रित करने में मदद करते है, जिससे आप अगले भोजन में ज्यादा खाने से बच जाते है। ये लंबे समय तक पेट भरा हुआ महसूस कराते है और ऊर्जावान रखते है। इसके साथ ही फाइबर आपके द्वारा खाए जाने वाले खाद्य पदार्थों से शरीर को मिली ऊर्जा को अवशोषित करने से रोकने में भी मदद करता है। इससे वज़न संतुलित रखने या वज़न घटाने में मदद मिलती है।

3. मधुमेह को नियंत्रण करने में सहायक : अलसी के बीजों का अंकुरित सेवन करने से रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करता है। अलसी के बीजों को अंकुरित करने से इसमें फाइबर और चोकर (खाद्य पदार्थों का रेशेदार हिस्सा) की मात्रा बढ़ जाती है, जोकि मधुमेह रोगियों के लिए लाभदायक होता है। इसलिए मधुमेह के मरीज को प्रति दिन एक मुट्ठी अलसी के बीजों का सेवन ज़रूर करना चाहिए। अंकुरित अलसी रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करता है, क्योंकि इसमें घुलनशील और अघुलनशील फाइबर की अच्छी मात्रा होती है। फाइबर, विशेष रूप से घुलनशील फाइबर जो आंत में शर्करा के अवशोषण को धीमा करता है, जिसके परिणाम स्वरूप रक्त में शर्करा का स्तर नियंत्रित होता है।

4. रक्तचाप तथा रक्त वसा को नियंत्रित करने में सहायक : अंकुरित अलसी का सेवन करने से हमारे शरीर में उच्च रक्त वसा को कम करने में मदद मिलती है और उच्च रक्तचाप को भी कम करने के साथ ही ये धमनियों में जमा रक्त वसा को कम करता है, जिसके परिणामस्वरूप हृदय स्वस्थ रहता है। अलसी के बीज में मौजूद अल्फा-लिनोलेनिक एसिड सूजन को कम करने में मदद करते हैं।

5. यूरिक अम्ल कम करता है : दरअसल, यूरिक अम्ल तब बढ़ता है, जब शरीर में प्यूरिन की मात्रा बढ़ने लगती है। ऐसे में अंकुरित अलसी का सेवन प्यूरिन में कमी लाने में मदद करता है। इसमें मौजूद फाइबर शरीर की नलियों से प्यूरिन की मात्रा को कम करता है और सूजन में कमी लाता है। जिन लोगों का यूरिक एसिड हमेशा बढ़ा रहता है, उन्हें अंकुरित अलसी के बीजों का सेवन ज़रुर करना चाहिए।

6. मस्तिष्क के विकास में मदद करता है : अलसी के बीज में ओमेगा 3 फैटी एसिड भरपूर मात्रा में होता है। अल्फा-लिनोलेनिक एसिड अलसी के बीज का मुख्य कार्यात्मक घटक है। यह शाकाहारी भोजन में ओमेगा-3 फैटी एसिड के विशेष स्त्रोत के रूप में कार्य करता है और मस्तिष्क स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। यह मस्तिष्क के बेहतर कामकाज में सहायता करता है। साथ ही यह सूजन को कम करने में मदद करता है और याददाश्त को भी बेहतर बनाता है। तनाव और चिंता जैसी समस्याओं से दूर रखता है। अंकुरित अलसी का सेवन करने से मनोभ्रंश जैसी मानसिक स्थितियों का जोखिम भी कम होता है।

अलसी के बीज को अंकुरित करने की विधि : अलसी के बीजों को कम से कम 4 घंटे पानी में भिगोकर रखना चाहिए। फिर पानी को अच्छी तरह से निथार लें तथा अलसी के बीज जितना संभव हो उतना पानी सोख लें, यही उचित अंकुरित उगाने के प्रमुख घटक है तथा तैयार अंकुर की प्रक्रिया में 1-5 दिन लग सकते है।

कैसे करें सेवन : अलसी के अंकुरित बीजों का सेवन करना काफी आसान है। आप इसे नाश्ता के रूप में किसी भी समय खा सकते है या फिर सलाद में मिला कर भी खा सकते है। कुछ लोगों को अलसी के अंकुरित बीज खाने से हल्का सा कड़वापन महसूस हो सकता है। ऐसे में आप बीजों में थोड़ा नींबू व काला नमक डाल कर इसका सेवन कर सकते है।

उत्पादकता वृद्धि में फसल चक्र का महत्व

....गतांक से आगे

* एक ही प्रकार की बीमारियों से प्रभावित होने वाली फसलों को लगातार एक ही खेत में नहीं उगाना चाहिए, इससे फसलों का चक्र बढ़ जाता है। जिससे फसलों की हानि नहीं उठानी पड़ती है। अच्छे फसल चक्र अपनाने से फसलों को कई बीमारियों से बचाया जा सकता है। जैसे कि चना एवं अरहर में उक्टा रोग की सही रोकथाम किसी खेत में 1-2 वर्ष के अंतराल में लगाने से की जा सकती है।

* फसल चक्र ऐसा होना चाहिए कि वर्ष भर उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग होता रहे। फसल चक्र निर्धारण के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि किसान के पास उपलब्ध संसाधनों जैसे भूमि, श्रम, पूंजी, सिंचाई इत्यादि का वर्ष भर सदुपयोग होता रहे एवं किसान की आवश्यकताओं की पूर्ति फसल चक्रग में समावेशित फसलों के द्वारा होती रहे।

फसल चक्र से लाभ

पोषक तत्वों का समान व्यय :- फसलों की जड़ें गहराई तथा फैलाव में विभिन्न प्रकार की होती है, अत: गहरी तथा उथली जड़ वाली फसलों के क्रमश: बोने से पोषक तत्वों का व्यय विभिन्न गहराईयों पर समान होता है, जैसे-गेहूं व कपास।

पोषक तत्वों का संतुलन :- विभिन्न पौधे नाईट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा अन्य पोष तत्व विभिन्न-भिन्न मात्राओं में लेते है। सस्य चक्र द्वारा इनका पारस्परिक

संतुलन बना रहता है।

हानिकारक कीट और रोग तथा खरपतवार की रोकथाम :- एक फसल अथवा उसी जाति की अन्य फसलें, लगातार बोने से उनके हानिकारक कीड़े, रोग तथा साथ उगने वाली खरपतवार उस खेत में बनी रहती है।

श्रम, आय तथा व्यय का संतुलन :- एक बार किसी फसल के लिए अच्छी तैयारी करने पर दूसरी फसल बिना विशेष तैयारी के ली जा सकती है और अधिक खाद चाहने वाली फसल को पर्याप्त मात्रा में खाद को देकर, शेष खाद पर अन्य फसलें लाभ के साथ ली जा सकती है, जैसे-आलू के पश्चात प्याज या कद्दूवर्गीय आदि।

भूमि में कार्बनिक पदार्थ की पूर्ति :- निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसलें आलू, प्याज आदि बोने से भूमि में जैव पदार्थों की कमीं हो जाती हैं इनकी पूर्ति दलहन वर्ग की फसलों तथा हरी खाद के प्रयोग से हो जाती हैं।

भूमि में नाईट्रोजन की पूर्ति :- दलहन वर्ग की फसलों की जैसे सनई, ढैंचा, मूंग इत्यादि भूमि में तीन या चार वर्ष में एक बार जोत देने से न केवल कार्बनिक पदार्थ ही मिलते हैं। अपितु नाईट्रोजन भी मिलता है, क्योंकि इनकी जड़ की छोटी-छोटी गांठों में नाईट्रोजन स्थापित करने वाले जीवाणु होते हैं।

खरपतवार की सफाई :- निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसलों के बोने से खरपतवार का सफाया अपने आप हो जाता है।

कटाव से बचत :- उचित फसल चक्र से वर्षा के जल से भूमि का कटाव रूक जाता है तथा खाद्य पदार्थ बहने से बच जाते हैं।

समय का सदुपयोग :- इससे कृषि कार्य उत्तम ढंग से होता हैं। खेत एवं किसान व्यर्थ खाली नहीं रहते हैं।

भूमि के विषैले पदार्थों से बचाव :- फसलों जड़ों से कुछ विषैला पदार्थ भूमि में छोड़ती हैं। एक ही फसल बोने से भूमि में विषैले पदार्थ अधिक मात्रा में एकत्रित होने के कारण हानि पहुंचाते हैं।

अधिक उपज :- उपर्युक्त कारणों से फसल की उपज प्राय: अधिक हो जाती हैं।

उर्वरा शक्ति की रक्षा :- भूमि की उर्वरा शक्ति ठीक रखी जा सकती है।

निष्टकर्ष :- अंतत: इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि फसल चक्र से मृदा उर्वरता बढ़ती है, भूमि में कार्बन-नाईट्रोजन के अनुपात में वृद्धि होती है। भूमि के पी.एच. तथा क्षारीपत में सुधार होता है। भूमि की संरचना में सुधार होता है। मृदा क्षरण की रोकथाम होती है। फसलों का बीमारियों से बचाव होता है, कीटों का नियंत्रण होता है, खरपतारों की रोथकाम होती है, वर्ष भर आय प्राप्त होती रहती है। भूमि में विषाक्त पदार्थ एकत्र नहीं होने पाते हैं। उर्वरक, अवशेषों का पूर्ण उपयोग हो जाता है। सीमित सिंचाई सुविधा का समुचित उपयोग हो जाता है। अत: संपोषित विकास के लक्ष्य प्राप्ति हेतु फसल चक्र आवश्यक है।

एक अनुमान के अनुसार फल मक्खी द्वारा 30 से 40 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। समग्र भारत में फल मक्खी द्वारा वार्षिक तौर पर 2945 करोड़ रुपए से भी अधिक का नुकसान होता है। फल तथा सब्ज़ियों के निर्यात हेतु भारत सरकार ने अनेक क्षेत्रों को एग्री-एक्सपोर्ट ज़ोन के तौर पर भी घोषित किया है। परन्तु यहां से निर्यात होने वाले उत्पादों पर फल मक्खी का उपद्रव अत्यंत प्रतिकूल असर डालता है।

फल तथा सब्ज़ियों की गंभीर समस्या फल मक्खी

डॉ. अभिषेक शुक्ला, कीट विज्ञान विभाग, न.म. कृषि महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी-396450 (गुजरात)

भारतवर्ष में छोटे तथा सीमांत किसान जिसमें प्रमुख रूप से आदिवासी तथा पिछड़े वर्ग के किसान शामिल हैं, के आर्थिक, सामाजिक उत्थान में फल तथा सब्ज़ियों की खेती का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। किसान भाई व्यापक पैमाने पर आम, अमरूद, चीकू, केला, पपीता, सीताफल, तरबूज़, खरबूजा जैसे फलों तथा खीरावर्गीय सब्ज़ियों की खेती करते हैं। इन फलों तथा सब्ज़ियों के सफलतापूर्वक उत्पादन में फल मक्खी नामक नाशीकीट फसल के उत्पादन तथा उनकी गुणवत्ता को व्यापक पैमाने पर नुकसान पहुंचाती है। एक अनुमान के अनुसार फल मक्खी द्वारा 30 से 40 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। समग्र भारत में फल मक्खी द्वारा वार्षिक तौर पर 2945 करोड़ रुपए से भी अधिक का नुकसान होता है। फल तथा सब्ज़ियों के निर्यात हेतु भारत सरकार ने अनेक क्षेत्रों को एग्री-एक्सपोर्ट ज़ोन (Agri Export Zone) के तौर पर भी घोषित किया है। परन्तु यहां से निर्यात होने वाले उत्पादों पर फल मक्खी का उपद्रव अत्यंत प्रतिकूल असर डालता है। फल मक्खी द्वारा व्यापक तौर पर होने वाले नुकसान तथा इसकी स्थानांतरण की क्षमता को ध्यान में रख कर इसको एक अंतर्राष्ट्रीय नाशीकीट (International Pest) के तौर पर जाना जाता है और इसके फैलाव को रोकने के लिए विश्व भर में विभिन्न फलों तथा सब्ज़ियों के निर्यात हेतु अनेक कड़े नियम बनाए गए हैं, जिनका सभी देश बड़ी ही कड़ाई से पालन करते हैं।

फल मक्खी के विषय में कुछ जानकारी :

1. फल मक्खी को सुनहरी मक्खी अथवा पीली मक्खी के नाम से भी जाना जाता है।

2. विश्व भर में फल मक्खी की 4000 से भी अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं।

3. भारत में फल मक्खी की 170 से भी अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं।

4. इन सभी प्रजातियों में से भारत में 7 से 8 फल मक्खी की प्रजातियां कृषि और बागवानी फसलों के लिए आर्थिक तौर पर अत्यंत महत्वपूर्ण होती है तथा ये फसलों को आर्थिक तौर पर नुकसान करती हैं।

5. फल मक्खियां आम, चीकू, अमरूद, केला, पपीता, सफेद जामुन, सीताफल, कोकम आदि को नुकसान पहुंचाती है। इन फल मक्खियों की प्रजातियों में बेक्टोटोसेरा डोर्सोलिस, बेक्टोसेरा जोनाता तथा बेक्टोसेरा करेक्टा प्रमुख हैं, जबकि बेर को नुकसान पहुंचाने वाली फल मक्खी कार्पोमिया विसुवियाना है, जो शुष्क तथा अर्ध शुष्क क्षेत्रों में बेर की फसल को नुकसान करती है, इसी प्रकार से खीरा वर्गीय सब्ज़ियों जैसे कि करेला, गिलकी, लोकी, ककड़ी, कद्दू, किकोड़ा आदि तथा तरबूज़ और खरबूजा जैसे फलों को नुकसान करने वाली प्रजातियां बेक्टोसेरा कुकुरबीटी तथा डेकस सीलीयेटस हैं।

6. फल मक्खी एक बहुभक्षी नाशीकीट है तथा ये अनेक प्रकार के फलों व सब्ज़ियों को नुकसान करती है, साथ ही साथ अनेकों जंगली फलों व सब्ज़ियां जोकि खरपतवार के रूप में उगते है, पर भी अपना जीवन यापन करती है।

7. फल मक्खी का प्रकोप संपूर्ण वर्ष पर्यान्त देखा जाता है। इसमें भी मार्च से अगस्त माह के दौरान इनकी संख्या बहुत अधिक होती है।

8. फल मक्खी सामान्य तौर पर 2 से 4 किलोमीटर तक उड़ती है तथा अधिकतम 90 किलोमीटर तक भी उड़ सकती है।

10. फलों को ग्रसित करने वाली फल मक्खी के नर तुलसी में पाए जाने वाले 'मिथाईल यूजीनोल' नामक रसायन की तरफ आकर्षित होते हैं।

11. सब्ज़ियों को ग्रसित करने वाली फल मक्खी के नर 'क्यू-ल्यूर- नामक रसायन की तरफ आकर्षित होते हैं।

12. फल मक्खी की मादा कीट प्रोटीन हाईड्रोलाईसेट, गुड़, केले तथा अन्य फलों के रसों की तरफ आकर्षित होती है।

13. तुलसी में मिथाईल यूजीनोल नामक रसायन पाया जाता है, परन्तु 1 मिलीलीटर मिथाईल यूजीनोल प्राप्त करने के लिए तुलसी की 370 ग्राम पत्तियों से रस निकालना पड़ता है।

14. फल मक्खी को एक अंतर्राष्ट्रीय नाशीकीट के रूप में जाना जाता है।

15. फल मक्खी के एक स्थान से दूसरे स्थान तक होने वाले स्थानांतरण को रोकने के लिए इसे संगरोधन नाशीकीट या क्वारेनटाईन पैस्ट घोषित किया गया है तथा इसे रोकने के लिए अंतर्राष्ट्रीय नियम भी बनाए गए हैं, जिनका बहुत ही कड़ाई से पालन किया जाता है।

16. मिथाईल यूजीनोल तथा क्यू-ल्यूर नामक रसायनों के प्रयोग से अनेक प्रकार के ट्रेप बना कर फल मक्खी की निगरानी की जा सकती है। विभिन्न ट्रेप के प्रयोग को बड़े विस्तार में सामूहिक तौर पर करने पर फल मक्खी का असरकारक नियंत्रण किया जा सकता है।

17. फल मक्खी के नियंत्रण हेतु देश-विदेश में विविध प्रकार के ट्रेप विकसित किए गए है, जिनमें (1) पारंपरिक फल मक्खी ट्रेप (2) पटेल फल मक्खी ट्रेप (3) मिनरल बोतल ट्रेप तथा (4) प्लाईवुड आधारित ट्रेप। इनमें पारंपरिक ट्रेप तथा पटेल फल

मक्खी ट्रेप को मिथाईल यूजीनोल / क्यू-ल्यूर को बार-बार चार्ज करना पड़ता है, जिससे लंबे समय तक इसके प्रयोग में समस्याएं पैदा होती रहती हैं तथा आशानुरूप परिणाम भी नहीं मिलते हैं। इसके पश्चात् इन रसायनों की हुत सी कम मात्रा में ज़रुरत पड़ने से ये बाज़ार में आसानी से उपलब्ध नहीं होते हैं। इन सब के कारण छोटे तथा सीमांत किसानों को इनके प्रयोग में अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है। दूसरी तरफ प्लाईवूड आधारित ट्रेप लंबे समय तक असरकारक रहते हैं। इनको फसल के एक मौसम में लगाने पर पूरे मौसम में ये फल मक्खी से होने वाले नुकसान को कम करते हैं। ये सभी ट्रेप बाज़ार में अलग-अलग कंपनियों/फर्मों द्वारा बना कर उपलब्ध करवाए जाते हैं।

18. अनेक विकसित देशों में फल मक्खी के नरों को बांध्य बना कर उनको बड़ी भारी संख्या में हेलिकोप्टर द्वारा छोड़ा जाता है। इस विधि द्वारा भी फल मक्खी की संख्या को बड़े पैमाने पर कम किया जा सकता है। इसे बंध्य नर कीट तकनीक (स्टराईल मेल इंसेक्ट टेकनीक, SIT) के नाम से भी जाना जाता है।

फल मक्खी की पहचान : फलों को ग्रसित करने वाली फल मक्खी सामान्य तौर पर बादामी रंग की पारदर्शी पंखों वाली तथा पीले रंग के पैर वाली होती है, जबकि सब्ज़ियों की फसल को नुकसान पहुंचाने वाली फल मक्खियों के पंखों पर अलग-अलग आकार के धब्बे होते हैं। मादा फल मक्खी के उदर भाग पर तीक्ष्ण अंडरोपक होता है, जिसका प्रयोग वो फलों के अंदर अंडे रखने में करती है। इसी प्रकार से नर फल मक्खी में उदर भाग अर्ध-चंद्राकार होता है। इसके अंडे सफेद रंग के होते हैं तथा इनके दोनों ही छोर पतले तीक्ष्ण होते हैं। फल मक्खी की अपरिपक्व अवस्था को मेगेट के नाम से जाना जाता है। ये मेगेट हल्के सफेद रंग के होते हैं, जिनमें पैर नहीं होते हैं और इनकी लम्बाई 8 से 10 मिलीमीटर तथा अग्र भाग कुछ नुकीला होता है। इनके प्यूपा बादामी रंग के तथा लगभग 2 से 3 मिलीमीटर लंबे होते हैं।

फल मक्खी का जीवन-चक्र : फल मक्खी की मादाएं आधे अथवा पूर्ण पके फलों की बाहरी त्वचा पर अपने अंडरोपक की मदद से अंडे देती है। मादा फल मक्खी अपने जीवन-काल के दौरान प्रयोगशाला में 3000 तक अंडे देती है, मगर प्राकृतिक अवस्था में 1200 से 1300 तक अंडे देती है और एक मादा 3 से 5 तक अंडे विभिन्न फलों तथा सब्ज़ियों के अंदर देती है। अंडों

शेष पृष्ठ 8 पर

------ शेष पृष्ठ 7 की ------

फल तथा सब्ज़ियों की गंभीर समस्या – फल मक्खी

से वयस्क फल मक्खी बनने में 16 दिनों का समय लगता है। पूर्ण विकसित मैगेट फलों से बाहर कूद कर ज़मीन के अंदर जा कर गहरे भूरे रंग का प्युपेरियम में बदलते हैं, जिनमें से वयस्क मक्खी बाहर निकलती है। वयस्क मक्खी 8 से 9 दिनों में समागमन योग्य हो जाती है। इस प्रकार फल मक्खी का जीवन पूर्ण होता है। फल मक्खी की एक वर्ष में कई पीढ़ियां पूर्ण होती हैं।

फल मक्खी द्वारा नुकसान : मादा फल मक्खी अपने नुकीले तीक्ष्ण अंडरोपक द्वारा फलों और सब्ज़ियों की त्वचा के नीचे एक-एक या 2 से 3 अंडे समूहों में देती है। ये जहां पर भी अंडरोपक से अंडे देती है, उस स्थान का रंग गहरा हरा हो जाता है तथा उसमें से रस जैसा पदार्थ स्त्रावित होता रहता है। चीकू जैसे फलों में अंडरोपक द्वारा किए गए घाव से दूध के समान पदार्थ निकलता है। इन चिन्हों के आधार पर फल मक्खी के उपद्रव को आसानी से पहचाना जा सकता है। अंडे देने के लिए किए गए इन छिद्रों के कारण इन फलों का आकार विकृत तथा बेडोल हो जाता है। अनेक फलों जैसे अमरूद आदि में इसे बड़ी ही आसानी से देखा जा सकता है। फल मक्खी, फलों के बाग में नीचे पड़े हुए सड़े-गले फलों में भी अपने अंडे देना पसंद करती है।

इन अंडों से निकले मैगेट फलों के अंदर के गूदे (पल्प) को खाना आरंभ कर देते हैं। फल मक्खी से ग्रसित फल पेड़ों से असमय ही नीचे गिर जाते हैं, जिन पर बाद में फफूंदी तथा जीवाणुओं का भी आक्रमण होता है, जिससे उनमें सड़न उत्पन्न हो जाती है तथा इन फलों से कुछ समय पश्चात् एक खट्टी दुर्गंध आने लगती है। इस प्रकार की दुर्गंध के कारण अन्य फल मक्खियां भी इन सड़े-गले फलों की तरफ आकर्षित होने लगती हैं। फलों के बाग में इन सब के कारण बड़ी ही तेज़ी से फल मक्खी के प्रकोप में वृद्धि होती है। इस प्रकार के फल मानव उपयोग के लिए सर्वथा अनुपयुक्त होते हैं। फल मक्खियां मुख्यत: परिपक्व और तुड़ाई लायक फलों को अपना शिकार बनाती हैं, जिसके फलस्वरूप किसानों तथा उपभोक्ताओं, दोनों को ही भारी नुकसान उठाना पड़ता है। जिन क्षेत्रों में फल मक्खी का प्रकोप अधिक होता है, उन क्षेत्रों की साख पर भी बाज़ार तथा उपभोक्ताओं की मनोस्थिति पर प्रतिकूल असर पड़ता है। प्राय: उपभोक्ता इन क्षेत्रों से उत्पादित फलों को खरीदना कम अथवा बंद कर देते हैं। सामान्य रूप से फल मक्खी तीन प्रकार से नुकसान करती है : (1) उत्पादन में (2) फलों की गुणवत्ता में और (3) बाज़ार में क्षेत्र विशेष की साख पर प्रतिकूल असर डालती है।

आमतौर पर गर्म और नम वातावरण फल मक्खी को खूब रास आता है तथा इन स्थानों पर इसका प्रकोप संपूर्ण वर्ष भर देखने को भी मिलता है। हमारे यहां पर फल मक्खी का उपद्रव मार्च से अगस्त माह में अधिक होता है। आम तथा चीकू जैसे फलों में फल मक्खी द्वारा होने वाला नुकसान 30 से 40 प्रतिशत तक होता है।

खीरा वर्गीय सब्ज़ियों में फल मक्खी द्वारा नुकसान : मार्च माह में जब गर्मी बढ़ती है, तब खीरा वर्गीय सब्ज़ियों में फल मक्खी के प्रकोप की शुरूआत होती है। आमतौर पर ये फूलों, विकासशील कोमल फलों तथा कोमल त्वचा वाली परिपक्व सब्ज़ियों में अंडे देती है। इन अंडों से निकले मैगेट फलों के अंदर घुस कर उन्हें अंदर ही अंदर खाना शुरू कर देते हैं, जिनसे ये फल विकृत और बेडोल हो जाते हैं। इस कीट से ग्रसित फल धीरे-धीरे पीले पड़ कर पौधे से अलग हो कर ज़मीन पर गिर जाते हैं। सामान्यत: अप्रैल माह के दौरान फल मक्खी अधिक सक्रिय होती है तथा गिलकी, तरोई,

करेला, लोकी, ककड़ी, किकोड़ा तथा कद्दू जैसी सब्ज़ियों को अगस्त-सितंबर माह तक भारी मात्रा में नुकसान पहुंचाती है। खीरा वर्गीय सब्ज़ियों में फल मक्खी द्वारा 35 से 40 प्रतिशत तक का नुकसान दर्ज किया जाता है।

कभी-कभी शिमला मिर्च तथा टमाटर जैसी सब्ज़ियों में भी फल मक्खी का प्रकोप देखा गया है।

फल मक्खी का समन्वित प्रबंधन : फल मक्खी का प्रकोप मुख्यत: तुड़ाई लायक फलों तथा सब्ज़ियों पर होता है। अत: इनके नियंत्रण हेतु रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग किसी भी दशा में हितवाही नहीं माना जा सकता है और रासायनिक दवाओं का प्रयोग निर्यात किए जाने वाले उत्पादों के लिए भी हितकारी नहीं है। इन सबसे बचने के लिए फल मक्खी के नियंत्रण हेतु "प्रिवेन्शन इज़ बैटर देन क्योर" के सिद्धांत पर काम करने की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। फल मक्खी के प्रबंधन हेतु नीचे दिए गए उपायों का सावधानीपूर्वक उपयोग करने से इस कीट का भली-भांति नियंत्रण किया जा सकता है तथा ये सभी बिन्दु जैविक खेती (Organic Farming) के संदर्भ में भी उपयोगी हैं।

1. फलों के बाग-बगीचों की स्वच्छता का ध्यान रखना चाहिए। बगीचे में नीचे गिरे हुए, सड़े-गले फलों को समय-समय पर एकत्रित करके नष्ट कर देना चाहिए। इसके लिए इन सड़े-गले फलों को डेढ़ फुट गहरे गड्ढे में दबा कर उस पर मिथाईल पैराथियान पाऊडर भुरक देना चाहिए, जिससे ज़मीन में ही मैगेट तथा प्यूपा का नाश हो जाता है।

2. फलों के बाग की समय-समय पर गहरी जुताई करनी चाहिए, जिससे फल मक्खी के ज़मीन में दबे प्यूपा ऊपर आ जाते हैं तथा धूप, गर्मी व परभक्षियों द्वारा उनका नाश हो जाता है।

3. आम, अमरूद तथा चीकू के बाग में तुलसी के पौधे भी उगाने चाहिए तथा इन तुलसी के पौधों पर मैलाथियान दवा का छिड़काव करने से तुलसी की ओर आकर्षित होने वाले नर कीटों का नाश किया जा सकता है। इस प्रकार तुलसी की पत्तियों का खाने या किसी अन्य घरेलू उपयोग में प्रयोग नहीं करना चाहिए।

4. फलों के बागों में मिथाईल यूजीनोल तथा सब्ज़ियों के खेतों में क्यू-ल्यूर ट्रेप लगाने चाहिए। प्लाईवुड आधारित फल मक्खी ट्रेप का प्रयोग करने पर लंबे समय तक नर कीटों को आकर्षित करके उनका नाश किया जा सकता है। किसान भाई इस विधि को नर बंध्यकरण तकनीक (MAT) के तौर पर भी प्रयोग में ले सकते हैं। इस हेतु 10 ट्रेप प्रति हैक्टेयर की दर से पेड़ों पर लटकाने चाहिए तथा खीरा वर्गीय सब्ज़ियों में इनको लकड़ी पर अथवा लताओं को चढ़ाने हेतु बनाए गए मंडल पर इनको लटकाना चाहिए।

5. बेर के बागों में फल मक्खी के नियंत्रण हेतु मैलाथियान 15 मिलीलीटर अथवा निमार्क 40 मिलीलीटर अथवा फैनवलरेट 5 मिलीलीटर दवा 10 लीटर पानी में मिला कर बोर में मटर के आकार (Pea Stage) के फलों की शुरूआत हो, तब 15 दिनों के अंतराल पर 3 बार छिड़काव करना चाहिए।

6. फल मक्खी के अनेक प्राकृतिक शत्रु, प्राकृतिक तौर पर इसका नियंत्रण करते हैं। इनमें ब्रेकोन बर्र, चींटियां, मकड़ियां, मेंढक तथा परभक्षी पक्षियों का महत्वपूर्ण स्थ्थान है, जोकि फल मक्खी के मेगेट तथा प्यूपा का भक्षण करते है। अत: इनकी पहचान करके इनका संरक्षण और संवर्धन करने के प्रयास करने चाहिए।

7. आम के फलों में फल मक्खी के प्रकोप को पूर्ण रूपेण समाप्त करने हेतु बेपर हीट ट्रिटमेंट (VHT) तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए एक विशेष व्यवस्था खड़ी करनी पड़ती है। यहां आम के फलों को तोड़ कर उसको एक घंटे तक गर्म पानी में (लगभग 46 से 47 डिग्री सैंटीग्रेड) डुबा कर रखने से फल मक्खी के अंडों को नष्ट किया जा सकता है।

8. अल्ट्रा-वायलेट किरणों (UV rays) के प्रयोग से भी फलों में फल मक्खी के प्रकोप का संपूर्ण नाश किया जा सकता है।

9. विकसित देशों में

प्रयोगशालाओं में फल मक्खी का व्यापक पैमाने पर पालन-पोषण किया जाता है तथा इनमें नर फल मक्खियों को इन्फ्रारेड किरणों की मदद से बंध्य करके इन बंध्य नरों को बड़ी भारी संख्या में हेलिकाप्टर की मदद से बागों में छोड़ा जाता है। बंध्य नर उस क्षेत्र के सामान्य नरों के साथ मृदाओं से मिलन हेतु प्रतिस्पर्धा करते हैं और इनमें से कई बंध्य नर मादाओं से मिलन भी करते है, जिसके कारण मादाएं अनिषेचित अंडे देती हैं। इसके कारण एक निश्चित समय अंतराल के बाद उस क्षेत्र में फल मक्खी की संख्या में कमी आ जाती है तथा फल मक्खी द्वारा होने वाले आर्थिक नुकसान में भी भारी कमी आ जाती है। ये विधि काफी खर्चीली है तथा छोटे क्षेत्रों या टापुओं पर काफी असरकारक साबित हो सकती है। इस विधि को सीट (SIT) या बंध्य कीट तकनीक के नाम से जाना जाता है।

फल मक्खी नियंत्रण हेतु प्लाईवुड ब्लॉक तकनीक :

1. 12 मिलीमीटर मोटाई वाले प्लाईवुड के 5×5 सैंटीमीटर माप के टुकड़े करना।

2. ईथाइल/मिथाईल ऐल्कोहल 6 भाग (मि.ली.)

3. मिथाईल यूजीनोल या क्यू-ल्यूर 4 भाग (मि.ली.)

4. मैलाथियान या डी.डी.वी.पी. 1 भाग (मि.ली.)

5. इन सभी रसायनों का मिश्रण बनाकर प्लाईवुड के टुकड़ों को 24 से 48 घंटों तक इस मिश्रण में डुबो कर रखना चाहिए।

6. इस प्रकार से तैयार किए गए टुकड़ों को प्लास्टिक मिनरल वाटर बोतल में लटका कर उपयोग में लाया जा सकता है।

प्लाईवुड आधारित ट्रेप के फायदे :

1. ये ट्रेप 5 से 6 महीनों तक असरकारक रहते हैं।

2. इनको बार-बार मिथाईल यूजीनोल या क्यू-ल्यूर से रिचार्ज करने की आवश्यकता नहीं रहती है।

3. इसे मिनरल वाटर बोतल में लगा कर प्रयोग करने से वर्षा के मौसम में भी ये अच्छी तरह से काम करता है।

4. इस तकनीक में मिथाईल यूजीनोल या क्यू-ल्यूर की बहुत ही कम मात्रा में ज़रुरत पड़ती है।

5. कीटनाशी दवाओं से होने वालू प्रदूषण में भी इस युक्ति के प्रयोग से कमी लाई जा सकती है।

6. यहां पर प्रति हैक्टेयर मात्र 10 ट्रेप की ही आवश्यकता पड़ती है।

फल मक्खी नियंत्रण हेतु सामूहिक अभियान : फल मक्खी एक बहुभक्षी नाशीकीट है, जोकि अनेकों फलों और सब्ज़ियों को नुकसान करती है। ये कीट संपूर्ण वर्ष पर्यान्त सक्रिय भी रहती है। फल मक्खी सामान्य तौर पर 2 किलोमीटर तक आसानी से उड़ती है तथा अधिकतम 90 किलोमीटर तक उड़ सकती है। इसकी इन्हीं खूबियों के कारण यदि किसी क्षेत्र के मात्र एक-दो किसान इसका नियंत्रण करें, तो उनको सफलता नहीं मिलेगी। अत: यदि उस क्षेत्र के अधिकतर किसान भाई सामूहिक अभियान के रूप में फल मक्खी नियंत्रण कार्यक्रम को शुरू करें तथा संपूर्ण विस्तार में एक साथ फल मक्खी के ट्रेप लगाएं, तो उनको बड़ी सफलता मिलेगी और फल मक्खी का बहुत ही असरकारक नियंत्रण किया जा सकेगा। सामूहिक प्रयासों के माध्यम से फल मक्खी के प्रकोप में 90 प्रतिशत तक की कमी लाई जा सकती है। कई वर्षों तक नियमित रूप से फलों तथा सब्ज़ियों की फसल में फल मक्खी ट्रेप लगाने से फल मक्खी पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है, जिससे समग्र विस्तार फल मक्खी मुक्त क्षेत्र (Pest Free Zone) के तौर पर घोषित किया जा सकता है। इससे फल-सब्ज़ियों के निर्यात में आसानी होगी और किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार आएगा। अत: फल मक्खी के नियंत्रण को एक सामूहिक अभियान के तौर पर अपनाना चाहिए।

आप सभी के सम्मुख प्रस्तुत फल मक्खी के विषय में यह जानकारी रखने के पश्चात् आशा है, नहीं पूर्ण विश्वास है कि फल मक्खी के विषय में उक्त जानकारी फल तथा सब्ज़ी उत्पादक किसान भाईयों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

गमलों को बनाएं किचन गार्डन का हिस्सा

खाली ज़मीन के उपयोग के लिए किचन गार्डन को बनाएं जरिया : अगर आप घर के बाऊंड्री के भीतर खाली ज़मीन पड़ी हुई है, तो किचन गार्डन के रूप में इसका प्रयोग कर अपनी रोज़ाना की जरुरतों को पूरा किया जा सकता है। इस खाली ज़मीन से आप अपने डेली (रोजाना) के यूज भर की सब्ज़ियां, फल और फूल आसानी से उगा सकते है।

गमले भी हो सकते हैं किचन गार्डन का हिस्सा : जिन लोगों के घर में सब्ज़ियां उगाने के लिए खाली ज़मीन नहीं है। वह भी घर पर किचन गार्डन बना कर सब्ज़ियां उगा सकते हैं। इसके लिए गमले का इस्तेमाल किया जा सकता है। गमलों में सब्ज़ियां उगाने से पहले गमलों में भरी जाने वाली मिट्टी को पहले से तैयार कर लेना चाहिए। इसके लिए, मिट्टी में गोबर की सड़ी खाद, वर्मी कम्पोस्ट या नाडेप कम्पोस्ट को मिट्टी में अच्छी तरह से मिला लेना चाहिए।

गमले में लगाई जाने वाली सब्ज़ियों के मामले में यह ध्यान दें कि एक बार में ही खत्म हो जाने वाली सब्ज़ियों की जगह उन मौसमी सब्ज़ियों को उगाएं, जिससे कई बार फलत ली जा सकें। गमले में सब्ज़ी बीज बोने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि आप अच्छी किस्म के बीज का इस्तेमाल ही कर रहे हैं। गमले में उगाए जाने वाले सब्ज़ी के मामले में इस बात पर विशेष ध्यान देना होता है कि उसमें ली जाने वाली सब्ज़ी के पौधे और जड़ों का फैलाव ज्यादा ना हो। इसलिए उन्हीं सब्ज़ियों को लगाना चाहिए, जो कम जगह घेरती हों।

गमलों में लगाई गई सब्ज़ियों को छत के ऊपर, टेरिस पर या खिड़कियों और दरवाज़ों के पास आसानी से रखा जा सकता है। जिसे आसानी से एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता है। इससे गमले में लगाए जाने वाले पौधों को सूरज की रौशनी दिखाना और पानी देना भी आसान होता है।

किचन गार्डन के लिए इन सब्ज़ियों का करें चयन : आप मौसम को ध्यान में रख कर अपने किचन गार्डन के लिए सब्ज़ियों का चयन करें। बारिश के शुरूआत में यानी जून-जुलाई में बैंगन, मिर्च, खीरा, तोरई, लोबिया, बरसाती प्याज़, अगेती फूलगोभी, लोबिया, भिण्डी, अरबी, करेला, लौकी, टमाटर, मिर्च, कद्दू की रोपाई या बुवाई की जा सकती है। वहीं रबी सीज़न की शुरूआत यानी अक्तूबर-नवम्बर में चोलाई, लहसुन, टमाटर, भिंडी, बीन्स, गांठ गोभी, पत्ता गोभी, शिमला मिर्च, बैंगन, सोया, पालक, चुकंदर, मूली, मेथी, प्याज़, लहसुन, पालक, फूल गोभी, गाजर, शलगम, ब्रोकली, सलाद पत्ता, बाकला, बथुआ, सरसों साग जैसी सब्ज़ियों की बुवाई या रोपाई की जा सकती है। जायद के सीज़न यानी फरवरी-मार्च में घिया, तोरी, करेला, टिंडा, खीरा, लौकी, परवल, कद्दू, भिंडी, बैंगन, धनिया, मूली, ककड़ी, हरी मिर्च, खरबूजा, तरबूज, राजमा, ग्वार जैसी सब्ज़ियों की बुवाई कर सकते हैं।

इसके अलावा कुछ मैडिसनल प्लांट को भी उगाया जा सकता है, जिसका उपयोग अगर हम रोज़ करें, तो स्वास्थ्य को बेहतर बनाए रखने में मदद मिलती है। इनमें नीम, तुलसी, एलोवेरा, गिलोय, पुदीना, अजवायन, सौंफ, मीठी नीम, अदरक की फसल लिया जाना आसान है। इनके साथ ही हम मौसमी फलों के पौधों की रोपाई कर घर की खूबसूरती में भी चार-चांद लगा सकते है।

जिनके पास पर्याप्त मात्रा में किचन गार्डन के लिए ज़मीन उपलब्ध हो, वह सब्ज़ियों के साथ फलदार पौधे जैसे पपीता, केला, नींबू, अंगूर, अमरूद, स्ट्राबेरी, रसभरी, अनार, करौंदा आदि रोप कर आसानी से ताज़े फल प्राप्त कर सकते है।

किचन गार्डन में काम आने वाले औज़ार : अगर हम किचन गार्डन में सब्ज़ियां या फल उगाने जा रहे हैं, तो उसके लिए काम आने वाले कुछ-कुछ औज़ारों की भी ज़रुरत पड़ती है, जिससे किचन गार्डन का काम आसान बनाया जा सकता है। किचन गार्डन में गुड़ाई के लिए कुदाल और फावड़ा को ज़रुरी औज़ारों में शामिल किया जा सकता है। इसके अलावा निराई के लिए खुरपी, पानी देने के लिए पाइप, दरांती, टोकरी, बाल्टी, सुतली, बांस या लकड़ी का डंडा, एक छोटा स्प्रेयर की भी ज़रुरत पड़ती है। जो आसानी से नज़दीक के मार्केट से खरीदी जा सकती है।

घर की वस्तुओं से बनाएं ऑर्गेनिक खाद

: आप घर से निकलने वाले कूड़े-करकट, सब्ज़ियों के छिलकों, ज़मीन में गड्ढा खोद कर दबा दें और उस पर पानी के छींटे मारते रहें। 15-20 दिन में यह खाद इस्तेमाल के लिए पूरी तरह तैयार हो जाती है। जिसे अपने किचन गार्डन में खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

किचन गार्डन बनाने के लाभ : किचन गार्डन में सब्ज़ियां और फल-फूल से यह ना केवल हर समय ताज़ा मिलती हैं, बल्कि घर के आस-पास की खाली भूमि का सदुपयोग भी हो जाता है। इससे सब्ज़ियों और फल-फूल के ऊपर होने वाले

खर्च की पूरी तरह से बचत हो जाती है। इसके साथ ही हमारी बाज़ार की सब्ज़ियों पर निर्भरता कम होने से सब्ज़ी खरीदने में होने वाले समय की बचत हो जाती है। उनका कहना है कि किचन गार्डन में घर के व्यर्थ पानी और कूड़े करकट का उपयोग भी हो जाता है।

किचन गार्डन आपको प्रकृति के और भी करीब लाता है और सेहत के लिए भी काफी फायदेमंद होता है, क्योंकि पौधे की देखभाल करने में आपको संतुष्टि मिलती है और आपका तनाव कम होता है। इसके साथ रसायन मुक्त सब्ज़ियां होने से सेहत भी अच्छी रहती है।

खेती एक घाटे का धंधा

इस घाटे से किसान दम तोड़ रहा है

भारतीय संस्कृति में पर्व- त्यौहार, रीति-रिवाज खेती से जुड़े है।। खेती ही भारत के आत्मनिर्भर होने का मूल कारण है। हमारा समाज हमारा अध्यात्म कृषि से जुड़ा है। 'बैसाखी पंजाब का कृषि आधारित त्यौहार है।' मुझे याद है जब गेहूं काट ली जाती, तो मरला दो मरला गेहूं को किसान काटता नहीं था, बल्कि चिड़ियों-कबूतरों के लिए छोड़ देता था।

मा. मोहन लाल, पूर्व परिवहन मंत्री, पंजाब

मुझे इतना भी याद है कि खेत जोतने से पहले हम खेत के चारों कोणों में कुल देवता के नाम बड़े-बड़े रोट तैयार कर दबा देते थे। भारत की खेती हमारे जीने का ढंग है। समाज का 70 प्रतिशत भाग खेती पर निर्भर है, परन्तु भारत के अंग्रेज़ी राज में भारत की अर्थव्यवस्था नष्ट कर दी। उन्होंने भूमि व्यवस्था को बदल कर भारत में जमींदारी प्रथा को जन्म दिया क्योंकि उन्हें शासन चलाना था।

अत: समाज को बांट दिया। वास्तव में अंग्रेज़ों ने किसान को निरंतर गरीब बना दिया। खेती करना घाटे का सौदा हो गया। परिणामस्वरूप भारत में हर साल 2000 किसान खेती करना छोड़ रहे है। कर्ज़ के बोझ में किसान हज़ारों की संख्या में आत्महत्याएं कर रहे है।

खेती पर आत्मनिर्भरता खत्म होती जा रही है। ऊपर से मौसम ने हमेशा किसानी के काम का अपमान किया। पांच सालों में केवल एक साल मौसम ने किसान का साथ दिया है। कभी सूखा, कभी ओलावृष्टि, कभी आंधी-तूफान और कभी टिड्डी दल ने किसान के होश उड़ा दिए। पंजाब के किसानों पर 1,04,353 करोड़ का कर्ज़ा है। भारत के किसानों पर 2025 की पहली तिमाही में विदेशी कर्ज़ा 736.331 डॉलर था।

इससे हमें खुशी नहीं होनी चाहिए कि अमेरिका और चीन का किसान भारत के किसान से ज्यादा कर्ज़दार नहीं हो रहा। भारत में 60 प्रतिशत खेती सिंचाई विहीन है। किसान को मंडी में उपज के सही दाम नहीं मिल रहे है।

खेती पर लागतें बढ़ रही हैं। यही कारण है कि पिछले दिनों महाराष्ट्र, राजस्थान, तामिलनाडु, पंजाब-हरियाणा और यू.पी. में किसान आंदोलनरत हैं। किसानों की आत्महत्याओं में वृद्धि हुई है। किसान आंदोलन कोई आज शुरू नहीं हुए, अपितु किसान आंदोलनों का इतिहास 200 साल पुराना है। 19वीं शताब्दी में नील विद्रोह, मद्रास और पंजाब में किसान आंदोलन इसके उदाहरण हैं। भारतीय किसान आंदोलन को 'स्वतंत्रता आंदोलन' से जोड़ कर देखा जाए, तो किसान आंदोलनों ने स्वतंत्रता की लड़ाई को आसान बना दिया था।

अप्रैल, 1917 में नील आंदोलन पहला 'संगठित आंदोलन' था। इस किसान संघर्ष को अंग्रेज़ों ने दंगों का प्रशासनिक व्यवस्था में व्यवधान का नाम देकर, कुचल दिया। इस 'संगठित किसान संघर्ष' को 'ला एंड आर्डर' का रूप दे दिया। उदाहरण के लिए पंजाब, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश और बिहार किसान आंदोलन 'राष्ट्रीय स्वतंत्रता' के आंदोलन बन गए। किसान तलवार चलाना नहीं जानते, परन्तु किसी की तलवार की परवाह भी नहीं करते।

चौतरफा किसान कर्ज़ में फंसा है। हर साल 2.5 लाख किसान डिफाल्टर घोषित हो रहे है। कर्ज़ न चुका पाने के कारण किसान परेशान है। उसका दिमाग खराब हो चुका है। अत: आत्महत्या करने पर मज़बूर है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़ों के अनुसार पिछले एक दशक में किसानी में लगे 12,000 लोगों ने आत्महत्या की।

नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार अकेले 2022 में 11,290 किसानों और खेतिहर मज़दूरों ने

आत्महत्या की। संयुक्त किसान मोर्चा ने बताया कि 10 जुलाई, 2021 तक विरोध-प्रदर्शन में 537 से ज्यादा प्रदर्शनकारियों की मौत हुई।

अक्तूबर और नवम्बर 2021 में भारतीय किसान यूनियन के नेता राकेश टिकैत ने कहा था कि लगभग 750 प्रदर्शनकारी मारे जा चुके हैं। विरोध-प्रदर्शनों की मुख्य मांगों में सभी फसलों की न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) व्यवस्था के लिए कानून बनाया जाए। सभी किसानों के लिए पूर्ण मुहिम मनरेगा के तहत किसानों को खेती के लिए निश्चित मज़दूरी 700 रुपए प्रति दिन और साल में 200 दिनों का रोज़गार निश्चित करना शामिल है। ऋण माफी का विषय अभी तक किसी सरकार के विचाराधीन नहीं।

है। खेती करने में आज किसान का दम घुट रहा है। क्यों? खेती पर जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है। जोत (होल्डिंग) का घटता आकार, विखंडित भूमि अनिश्चित मौसम, सिंचाई का अभाव, खेती पर लगातार बढ़ती लागत से किसान कर्ज़ के जाल में फंसता जा रहा है। उसकी आय घट रही है।

यही कारण है कि देश में 'किसान आंदोलन' तेज़ हो रहे हैं। कृषि की नीतियां बदलना, किसानों की आर्थिक दशा सुधारने की मांग की जा रही है। जनसंख्या के विस्फोटक रूप लेने से जोतों का आकार छोटा हो रहा है। एक किसान के पास एक हैक्टेयर से भी कम ज़मीन रह गई है। भूमि छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट गई है। इससे किसान का भरण-पोषण

अधिक उत्पादन के लिये अपनायें

फूलगोभी की उन्नत खेती

पश्चिम बंगाल, बिहार उत्तर प्रदेश तथा अन्य स्थानों में इसका उत्पादन व्यापक पैमाने पर होता है। वर्तमान में इसे सभी स्थानों पर उगाया जाता है तथा दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य में इसे साल भर उगाया जाता है।

जलवायु :- फूलगोभी के लिए ठंडी आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है, यदि दिन अपेक्षाकृत छोटे हों तो फूल की बढ़ोत्तरी अधिक होती है। फूल तैयार होने के समय तापमान अधिक होने से फूल छोटे और पीले रंग के हो जाते हैं। अगेती जातियों के लिए अधिक तापमान और लंबे दिनों की आवश्यकता होती है। 28 से 31 डिग्री सेल्सियस तापमान पौधों के अधिक समुचित विकास और फूलाओं के उत्तम गुणों के लिए सर्वोत्तम माना गया है।

भूमि :- फूलगोभी की खेती सभी प्रकार भूमियों में की जा सकती है, किन्तु गहरी दोमट भूमि जिसमें पर्याप्त मात्रा में जीवांश उपलब्ध हो, इसकी खेती के लिए अच्छी होती है। हल्की संरचना वाली भूमि में पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद डालकर इसकी खेती की जा सकती है। जिस भूमि का पी.एच. मान 6.5 से 7 के मध्य हो, वह भूमि फूल गोभी के लिए उपयुक्त मानी गई हैं। पहले खेती की जुताई 2 बाद मिट्टी पलटने वाले हल से करें। इसके बाद दो

बाद कल्टीवेटर चलाएं और प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएं।

प्रजातियां

अगेती किस्में :- इस वर्ग की किस्मों में सितम्बर मध्य से अक्तूबर मध्य तक फूल आते हैं। जब तापमान 20-25 डिग्री सेल्सियस तक होता है, इसकी बुवाई मध्य मई तक और रोपाई जून के अंत तक या जुलाई के प्रथम सप्ताह तक कर दें। इस वर्ग की प्रमुख किस्में है :

पूसा अर्ली सिंथेटिक :- यह किस्म भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा 6 वंशक्रमों का संयोजन करके विकसित की गई है। हरी पत्तियों नीलापन लिए हुए सीधी रहती है। मध्य आकार का फूल मलाई की तरह सफेद ठोस व चपटा होता है। यह किस्म 75-80 दिन में तैयार हो जाता है। इसकी उपज 120-150 कुन्तल प्रति हैक्टेयर है।

पूसा कतकी :- यह भी एक अल्पकालीन किस्म है। फूल बंधे, अच्छे, छोटे आकार के व सफेद रंग के होते हैं। इसके फूल नवम्बर में उपलब्ध हो जाता है। यह लगभग 125 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक पैदावार देती है। यह किस्म अन्य प्रजलित किस्म में सर्वोत्तम मानी गई है।

कल्यानपुर अगेती :- इस किस्म का विकास चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि. के कल्याणपुर स्थित शाक-भाजी अनुसंधान केंद्र द्वारा किया गया है। फूल सफेद और सुगठित होते है, जो अक्तूबर में कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

पूसा दीपाली :- इस किस्म का विकास भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा किया गया है। पौधे सीधे खड़े रहने वाले होते है, जिनमें 30 से 35 छोटी और गोलाकार सिरों वाली हल्के रंग की पत्तियां होती हैं। फूल कई शाखाओं वाला व सुगठित होता है। फूल मध्य अक्तूबर में तैयार होने शुरू हो जाते हैं। यह किस्म उत्तरी भारत में जुलाई के शुरू से मध्य तक रोपाई के लिए उपयुक्त है।

एस-234 :- इस किस्म का विकास गो.ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि., पंतनगर द्वारा किया गया है। इसके बीज पौधशाला मे जून के महीने में बो दिए जाते हैं। पौधा मध्यम आकार का होता है। यह किस्म बीज बोने से फूल बनाने तक 80 से 100 दिन का समय ले लेती है।

मध्यकालीन (मुख्य मौसमी किस्में)

पूसा अगहनी :- इस किस्म के बीज की बुवाई जुलाई के अंतिम सप्ताह से 15 अगस्त तक की जाती है, फूल बड़े आकार के ठोस व सफेद होते हैं। यह किस्म 130 दिनों में फूल देने शुरू कर देती है तथा फूल नवंबर-दिसम्बर में बाजार में भेजने योग्य हो जाते हैं। यह प्रति हैक्टेयर 150 से 175 क्विंटल तक उपज दे देती है।

पटना मध्यकालीन :- यह बिहार राज्य की किस्म है। बिहार के अलावा इसे उत्तरी भारत में भी उगाया जाता है। मुख्य फसल के रूप में उगाये जाने के लिए एक मुख्य किस्म है। फूल अधिक बड़े व सुगठित होते है। फूल मध्य नवंबर से मध्य दिसंबर तक उपलब्ध रहते हैं। वह प्रति हैक्टेयर 150 क्विंटल तक उपज देती है।

जापानी इम्प्रूव्ड :- यह एक इजरायल की उन्नत किस्म है, जिसे भारत में सफलता पूर्वक उगाया जा रहा है। इस किस्म का पौधा छोटा होता है एवं यह किस्म 100 से 110 दिन में फूल देना शुरू कर देती है। फूल ठोस हल्के पीले और मध्यम आकार के होते है। यह प्रति हैक्टेयर 175 से 180 क्विंटल तक उपज देती है।

जाइंट स्नोबाल :- इस किस्म की रोपाई अगस्त सितम्बर में की जाती हैं। रोपाई के लगभग 85 से 90 दिनों बाद फूल बाजार में भेजने योग्य हो जाते हैं। फूल बड़े आकार के ठोस और देखने में आकर्षक लगते है। इसमें प्रति हैक्टेयर 200 क्विंटल तक पैदावार मिल जाती है।

पूसा सिंथेटिक :- इस किस्म में पौणे सीधे खड़े रहने वाले होते हैं, जिनमें हरे रंग के विभिन्न शेडों की 24 से58 पत्तियां होती है। पौधे मध्यम आकार के, फूल कुछ ढके हुए और कुछ क्रीम रंग के या बिलकुल सफेद व ठोस होते हैं।

पूसा शुभ्रा :- गो.ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि., पंतनगर द्वारा विकसित यह किस्म काला सड़न रोगरोधी है। इस किस्म की हरी पत्तियां नीलापन लिए हुए सीधी खड़ी रहती है। फूल सफेद, ठोस, रोएं रहित और 130 दिन में तैयार हो जाता है। यह 205 कुंतल प्रति हैक्टेयर तक उपज दे देती है।

नरेन्द्र गोभी 1 :- इस किस्म का विकास नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि. वि., फैजाबाद द्वारा किया गया है। इसके फूल नवम्बर में तैयार हो जाते हैं, 65 से 80 दिन में तैयार होने वाली यह किस्म 200 से 250 कुंतल प्रति हैक्टेयर की उपज देती है।

पूसा हिम ज्योति :- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा इस किस्म को विकसित किया गया है। इसके फूल नवम्बर में तैयार हो जाते हैं।

पिछेती किस्में

सलेक्शन 7 :- यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के कैट्राईन स्थित शोध केन्द्र द्वारा विकसित किस्म है। इसके फूल मध्यम आकार के ठोस, सफेद पत्तियों वाले तथा चमकीले सफेद रंग के होते हैं। इस किस्म के फूल पत्तियों द्वारा स्वत: ढके रहते है, जिसके कारण उनका रंग अधिक सफेद होता है। इस किस्म से प्रति हैक्टेयर 150 कुंतल तक उपज मिल जाती है।

दानिया कलिंपोंग (बंगाल) :- इस किस्म के फल सुगठित और दूधिया रंग के होते हैं और फूल जनवरी फरवरी में उपलब्ध होते हैं।

स्नोबाल 16 :- इस किस्म के बड़े सुगठित व सफेद रंग के होते हैं। फूल मध्य जनवरी से अप्रैल तक उपलब्ध रहते हैं। इसकी उपज प्रति हैक्टेयर 150 से 160 क्विंटल तक प्राप्त हो जाती है।

पूसा स्नोबाल 1 :- यह संकरण विधि द्वारा विकसित किस्म है, जिसकी बाहरी पत्तियां सीधी खड़ी रहती हैं और भीतरी पत्तियां प्रारंभिक अवस्था में फूलों को ढके रहती है। फूल ठोस, सफेद और मध्यम आकार के होते हैं। इसकी उपज प्रति हैक्टेयर 150 से 200 क्विंटल तक प्राप्त हो जाती है।

पूसा स्नोबाल 2 :- किस्म को चयन द्वारा विकसित किया गया है। बाहरी पत्तियां सीधी खड़ी रहती है, परंतु भीतरी पत्तियां शुरू में फूल को ढके रहती है। यह 200 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक उपज दे देती है।

पूसा स्नोबाल के 1 :- इस किस्म का विकास भी चयन द्वारा किया गया है, इसकी पत्तियां हल्के रंग की होती हैं और उनके किनारे झुर्रीदार होते हैं। फूल सफेद व उत्तम भंडारण क्षमता वाले होते हैं। इसकी उपज प्रति हैक्टेयर लगभग 220 क्विंटल तक प्राप्त हो जाती है।

नवीनतम किस्में

के.टी. 25 :- इसे जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड की पहाड़ियों पर उगाने की सिफारिश की गई है।

पूसा कार्तिक संकर :- सितम्बर में तैयार होने वाली इस किस्म के फूल कसे हुये, अपेक्षाकृत सफेद और लगभग 95 दिनों में तैयार हो जाते हैं। एक फूल का वजन लगभग 475 ग्राम होता है। यह किस्म मृदुरोमिल आसिता के प्रति अवरोधी है।

पूसा भारद :- नवंबर में तैयार होने वाली इस किस्म का एक फूल लगभग 900 ग्राम का होता है तथा इस किस्म की औसत उपज 240 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

पूसा मेघना :- 350 से 400 ग्राम प्रति फूल देने वाली यह किस्म 99 दिनों का समय लेकर सितम्बर में तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 125 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

पूसा पौशजा :- केवल 75 दिन की अवधि लेने वाली यह किस्म दिसम्बर जनवरी में तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 400 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

पूसा भाक्ति :- 75 दिनों में तैयार तथा 440 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की औसत उपज देने वाली यह किस्म दिसम्बर जनवरी माह में तैयार हो जाती है।

बीज बुवाई :- फसल के अनुसार बुवाई निम्न तीन बार की जाती है।

अगेती फसल	- मई, जून
मध्यकालीन फसलें	- जुलाई, अगस्त
पिछेती फसल	- अक्तूबर, नवम्बर

बीज की मात्रा :- अगेती फसल के लिए 600-700 ग्राम प्रति हैक्टेयर तथा मध्यकालीन एवं पिछेती फसल के लिए 375-500 ग्राम प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

पौधशाला :- चूंकि फूलगोभी का बीज बारीक होता है, अंत: उसे भली-भांति तैयार की गई। पौधशाला में बोया जाता है, ताकि उसकी अच्छी पौध सही समय में तैयार हो सके। क्यारियों बनाने से पूर्व उनमें पर्याप्त मात्रा में गोबर की खाद या कंपोस्ट खाद डाल दें, फिर उसकी जुताई करें। पौधशाला में 1 मीटर चौड़ी और 3 मीटर लंबी क्यारियों बनाएं और दो क्यारियों के मध्यम 30 सैं.मी. नाली बनाएं। फूल गोभी को आर्द्र विगलन नामक रोग से बचाने के लिए बोने से पूर्व बीजों को नीम के काढ़े, या रासायनिक दवाओं (थीरम या कैप्टान का 2.5-3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) का प्रयोग अवश्य करें। फिर 3 से 5 सैं.मी. की दूरी पर पंक्तियां बनाकर उपचारित बीजों से बुवाई करके सूखी घास या पुआल से ढक दें (पौधशाला को जूट के बोरों से न ढकें), तत्पश्चात् हजारे से पानी दें। बीज के जमाव के बाद सूखी घास को सावधानीपूर्वक शाम

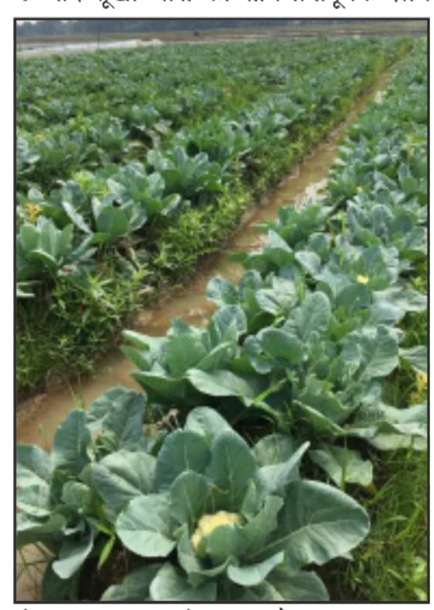

के समय निकाल दें। जब पौध निकल आएं तब क्यारियों के मध्य बनी नालियों से सिंचाई करें। अगेती किस्मों की पौधशाला में तेज धूप और अधिक वर्षा से पौधों को बचाने के लिएउस पर छप्पर या कम ऊंचाई की पॉली का प्रबंध अवश्य करें। इस प्रकार सही देखभाल से 4-5 सप्ताह बाद पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाएगी।

रोपाई :- रोपाई की दूरी भूमि की उर्वरता, मौसम और बाजार की मांग के ऊपर निर्भर करती है। सामान्य रूप से रोपाई की दूरी फसल के अनुसार की जानी चाहिए, जो कि अगेती मध्यकालीन तथा पिछेती प्रजातियों के लिए भिन्न-भिन्न होती है। अगेती किस्म के लिए पंक्ति से पंक्ति तथा पौध से पौध की दूरी 45 सैं.मी. रखते है तथा मध्यकालीन फसल के लिए पौध से पौध तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सैं.मी. रखते हैं।

क्रमश:

जलवायु परिवर्तन केवल एक पर्यावरणीय समस्या या आर्थिक चुनौती नहीं है। यह एक मानसिक स्वास्थ्य संकट भी है जो दुनिया के सबसे गरीब लोगों को सबसे ज्यादा प्रभावित करता है। मौसम संबंधी आघातों को रोकने के लिए जलवायु परिवर्तन से निपटना महत्वपूर्ण है।

जलवायु संकट का भावनात्मक सेहत पर असर

मुकुल व्यास

जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ता तापमान दुनियाभर के लाखों लोगों के भावनात्मक स्वास्थ्य को सीधे तौर पर प्रभावित कर सकता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि तापमान, आर्द्रता और धूप जैसी मौसम की स्थितियां आपके मूड, ऊर्जा और संज्ञानात्मक कार्यों पर असर डाल सकती हैं। अत्यधिक तापमान अक्सर मूड को खराब कर देता है, जबकि मध्यम, धूप वाली स्थितियां मूड को बेहतर बना सकती हैं। कुछ लोग जिनमें वृद्ध और मनोविकार वाले लोग शामिल हैं, मौसम परिवर्तनों के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं। संभवत: चिड़चिड़ापन, माइग्रेन और अनिद्रा जैसे लक्षणों का अनुभव कर सकते हैं।

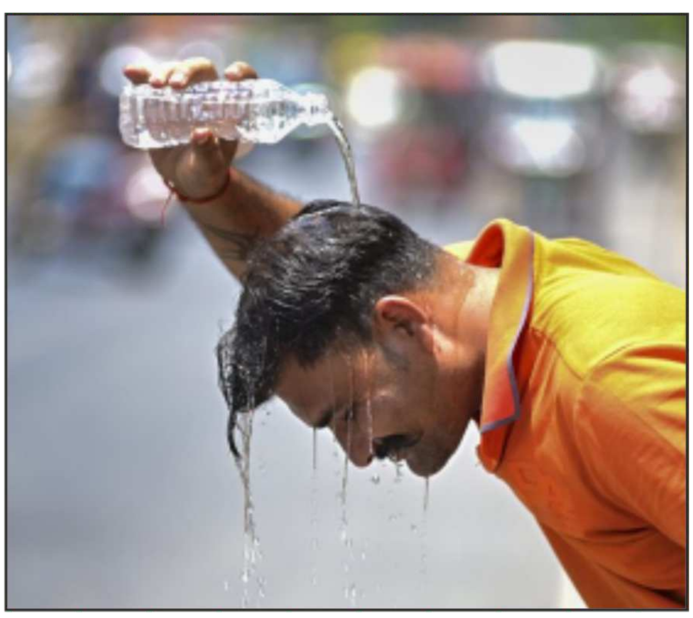

जलवायु परिवर्तन और चरम मौसम की घटनाएं मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है, जिससे तनाव, चिंता, डिप्रेशन और पीटीएसडी (पोस्ट ट्रॉमेटिक स्ट्रेस डिसऑर्डर) बढ़ सकता है। सोशल मीडिया डेटा के एक बड़े अध्ययन से पता चला है कि अत्यधिक गर्मी में लोग काफी ज्यादा चिड़चिड़े हो जाते हैं। शोधकर्ताओं ने 157 देशों के 1.2 अरब सोशल मीडिया पोस्ट की समीक्षा की। ये सभी 2019 के दौरान पोस्ट किए गए थे। उन्होंने 65 अलग-अलग भाषाओं में लिखे गए पोस्ट का विश्लेषण करने के लिए उन्नत कंप्यूटर प्रोग्राम का इस्तेमाल किया और प्रत्येक पोस्ट को उसके सकारात्मक या नकारात्मक होने के आधार पर स्कोर दिया।

शोधकर्ताओं ने लोगों के मूड स्कोर का मिलान स्थानीय मौसम के आंकड़ों से किया ताकि यह देखा जा सके कि तापमान का लोगों की ऑनलाइन बातों पर क्या असर पड़ा। इसके नतीजे दुनिया भर में स्पष्ट और एक जैसे थे। जब तापमान 35 डिग्री सेल्सियस से ऊपर चला गया, तो कम आय वाले देशों में लोगों के पोस्ट लगभग 25 प्रतिशत ज्यादा नकारात्मक हो गए। अमीर देशों में नकारात्मकता लगभग 8 प्रतिशत बढ़ गई। चीनी विज्ञान अकादमी के विज्ञानी जियांगहाओ वांग ने कहा, सोशल मीडिया डेटा हमें विभिन्न संस्कृतियों और महाद्वीपों में मानवीय भावनाओं की एक अभूतपूर्व झलक प्रदान करता है। यह डेटा हमें जलवायु परिवर्तन के भावनात्मक प्रभावों के पैमाने को मापने में मदद करता है जो पारंपरिक सर्वेक्षणों से संभव नहीं है। यह हमें वास्तविक समय में यह जानकारी देता है कि तापमान दुनिया भर में मानवीय भावनाओं को कैसे प्रभावित करता है।

शोधकर्ताओं ने विश्व बैंक के आंकड़ों का उपयोग करके देशों को आय स्तर के आधार पर अलग किया, जिसकी विभाजन रेखा प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 13,845 डॉलर निर्धारित की गई। इस सीमा से नीचे के देशों में गर्मी के प्रति भावनात्मक प्रतिक्रियाएं धनी देशों की तुलना में अधिक प्रबल थीं। यह इस बात को ध्यान में रखते हुए तर्कसंगत है कि अमीर देशों में अधिक एयर कंडीशनिंग और बेहतर स्वास्थ्य सेवा है। चरम मौसम से निपटने के लिए उनके पास मजबूत बुनियादी ढांचा है।

इस अध्ययन का नेतृत्व करने वाले एमआईटी के सिकी झेंग ने कहा कि हमारे अध्ययन से पता चलता है कि बढ़ता तापमान न केवल शारीरिक स्वास्थ्य या आर्थिक उत्पादकता के लिए खतरा है बल्कि यह दुनियाभर में लोगों की दैनिक भावनाओं को भी प्रभावित करता है। शोधकर्ताओं द्वारा प्रयुक्त एआई सिस्टम दर्जनों भाषाओं में लिखे गए पाठ के भावनात्मक लहजे को समझ सकता है, जिससे विभिन्न संस्कृतियों और देशों में भावनाओं की तुलना करना संभव हो जाता है।

शोधकर्ता वर्तमान परिस्थितियों तक ही सीमित नहीं रहे। उन्होंने जलवायु मॉडल का उपयोग करके यह अनुमान लगाया कि 2100 तक अत्यधिक गर्मी मानवीय भावनाओं को कैसे प्रभावित कर सकती है। यह मानते हुए कि लोग समय के साथ उच्च तापमान के साथ कुछ हद तक अनुकूलित हो जाएंगे। उन्होंने अनुमान लगाया कि सदी के अंत तक गर्मी के कारण भावनात्मक कल्याण 2.3 प्रतिशत तक बिगड़ जाएगा। अमेरिका में टल्सा स्थित सस्टेनेबल अर्बनाइजेशन लैब के वैज्ञानिक निक ओब्राडोविच ने कहा की हमारे वर्तमान अध्ययन और पिछले अध्ययनों के निष्कर्षों से यह स्पष्ट है कि मौसम वैश्विक स्तर पर भावनाओं को बदलता है। उन्होंने कहा कि जैसे-जैसे मौसम और जलवायु बदलते हैं, व्यक्तियों को अपनी भावनात्मक स्थिति पर पड़ने वाले झटकों के प्रति अधिक लचीला बनने में मदद करना समग्र सामाजिक अनुकूलन का एक महत्वपूर्ण घटक होगा।

दरअसल, यह शोध जलवायु परिवर्तन के बारे में सोचने के बिल्कुल नए रास्ते खोलता है। ज्यादातर अध्ययन शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों, आर्थिक क्षति या पर्यावरणीय विनाश पर केंद्रित है। लेकिन यह शोध दर्शाता है कि बढ़ता तापमान हमारे मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य पर भी असर डालता है, जिससे एक तरह का भावनात्मक प्रदूषण पैदा होता है जो पूरे ग्रह में फैल जाता है। इस अध्ययन की कुछ सीमाएं है। सोशल मीडिया उपयोगकर्ता सभी का पूरी तरह से प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। छोटे बच्चे और बुजुर्ग लोग अन्य आयु समूहों की तुलना में इस प्लेटफार्म का कम उपयोग करते हैं। विडंबना यह है कि ये लोग अक्सर अत्यधिक गर्मी के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं, जिसका अर्थ है कि गर्म मौसम का वास्तविक भावनात्मक प्रभाव अध्ययन में दर्शाए गए प्रभाव से भी अधिक गंभीर हो सकता है।

यह शोध एमआईटी की सस्टेनेबल अर्बनाइजेशन लैब की ग्लोबल सेंटीमेंट प्रोजेक्ट से आया है। वैज्ञानिकों ने अपना पूरा डेटासेट अन्य शोधकर्ताओं के लिए उपलब्ध कराया है। उम्मीद है कि यह समुदायों और नीति-निर्माताओं को एक ऐसी दुनिया के लिए तैयार होने में मदद करेगा जो लगातार गर्म होती जा रही है। झेंग ने कहा, हमें उम्मीद है कि यह संसाधन शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं और समुदायों को एक गर्म होती दुनिया के लिए बेहतर ढंग से तैयार होने में मदद करेगा।

जैसे-जैसे वैश्विक स्तर पर तापमान बढ़ता जा रहा है, इन भावनात्मक प्रभावों को समझना और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। अध्ययन बताता है कि जलवायु परिवर्तन केवल एक पर्यावरणीय समस्या या आर्थिक चुनौती नहीं है। यह एक मानसिक स्वास्थ्य संकट भी है जो दुनिया के सबसे गरीब लोगों को सबसे ज्यादा प्रभावित करता है। मौसम संबंधी आघातों को रोकने के लिए जलवायु परिवर्तन से निपटना महत्वपूर्ण है।

लेखक विज्ञान मामलों के जानकार हैं।

हरे चारे के लिए करें बरसीम की खेती

उत्तर भारत के सिंचित क्षेत्रों में बरसीम की खेती प्रमुखता से की जाती है। इसे चारे का राजा भी कहा जाता है। यह पशुओं का प्रिय चारा होता है, जो स्वादिष्ट, पोषक तत्वों से भरपूर और रसीला होता है। तो आइए जानते हैं बरसीम की खेती करने का तरीका।

उपयुक्त जलवायु : बरसीम की खेती के लिए ठंड का मौसम अनुकूल होता है। उत्तर भारत में इसे सर्दी व बसंत के मौसम में उगाया जाता है। इसके पौधे के अच्छे विकास के लिए 25 डिग्री सैल्सियस का मौसम उत्तम रहता है।

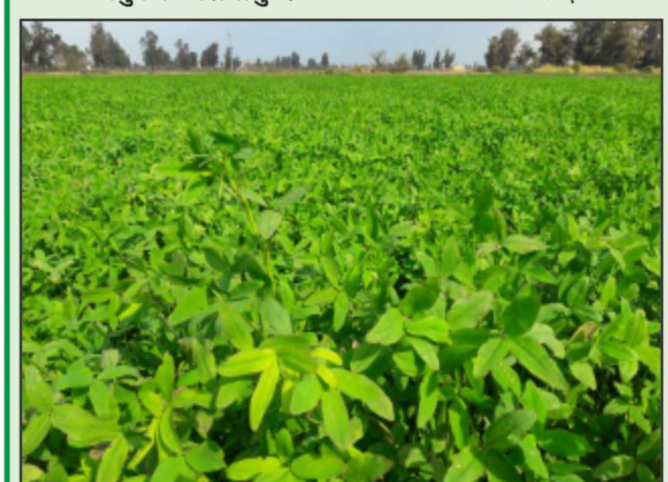

खेत की तैयारी : इसकी उपज दोमट, भारी और क्षारीय मिट्टी में आसानी से की जा सकती है। सबसे पहले मिट्टी पलटने के लिए सामान्यत: जुताई कर दें। इसके बाद 2-3 जुताई कल्टीवेटर से करना चाहिए। बरसीम की अच्छी फसल के लिए कैल्शियम और फास्फोरस युक्त मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है।

बुवाई का समय : इसकी बुवाई उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा राज्यों में अक्तूबर महीने में करनी चाहिए। वहीं गुजरात और पश्चिम बंगाल में इसकी बुवाई नवम्बर माह में करना उचित है।

प्रमुख किस्में : बरसीम की प्रमुख किस्में जैसे वरदान, मस्कावी, बी.एल.-1, बी.एल.-10, जे.बी.-1, जे.बी.-2, जे.बी.-3, बरसीम-2 और बरसीम-3 हैं।

बुवाई का तरीका : एक हैक्टेयर में बुवाई के लिए बरसीम का 25 किलोग्राम बीज लगता है। इसकी बुवाई छिड़काव विधि से की जा सकती है।

खाद एवं उर्वरक : प्रति हैक्टेयर फास्फोरस 80 किलोग्राम और नाइट्रोजन 20 किलोग्राम उचित है।

कटाई एवं उपज : बुवाई के बाद बरसीम की पहली कटाई 50 दिनों के बाद की जाती है। इसके बाद 28 दिनों के अंतराल में कटाई करते रहें। सामान्यत: बरसीम की 5 से 6 कटाई ली जा सकती है। यदि आधुनिक एवं वैज्ञानिक तकनीक से खेती की जाए, तो प्रति हैक्टेयर से 800-1100 क्विंटल चारे की उपज ली जा सकती है।

ऑस्ट्रेलिया में दुनिया का सबसे बड़ा ट्रैक्टर

दुनिया का सबसे बड़ा ट्रैक्टर ऑस्ट्रेलिया में है। यह पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के पर्थ शहर से 300 किमी उत्तर में एक ग्रामीण क्षेत्र कारनामा टाउन में स्थित है। यहां

के निवासियों का कहना है कि खेतों के राजा का स्वरूप आकर्षक है।

प्रभावशाली रूप हर किसी को आकर्षित करता है। इस राजा के सिंहासन पर बैठने के लिए इसमें बनी सीढ़ी से ऊपर-नीचे जाना पड़ता है। बड़े आकार का नारंगी ट्रैक्टर गाँव के चौराहे का गौरव है। इसके आकर्षण के कारण गांव में पर्यटन लगातार बढ़ रहा है।

ऑस्ट्रेलिया में विश्व का सबसे बड़ा ट्रैक्टर देखने के लिए इकट्ठी हुई लोगों की भीड़।

गौरतलब है कि यह ट्रैक्टर 11.5 मीटर ऊंचा, 16 मीटर लंबा और 42 टन वजनी है, जो मूल ट्रैक्टर से पांच गुना बड़ा है। इसके निर्माण में करीब एक साल का समय लगा है। अमेरिका का सबसे बड़ा ट्रैक्टर 'बिग बड 747' था। पिछले साल ऑस्ट्रेलिया में इतने बड़े ट्रैक्टर के निर्माण के बाद अब यह दुनिया का सबसे बड़ा ट्रैक्टर बन गया है।

इसे स्थानीय समुदाय द्वारा दान किये गये धन से बनाया गया था। यह कृषि उपकरण निर्माण में पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के ऐतिहासिक योगदान को दर्शाता है।

बिग ट्रैक्टर कमेटी के अध्यक्ष ब्रैंडन हेस्लर का कहना है कि ट्रैक्टर खेतों का राजा और किसान का बेटा है, जिसे देखकर इसके साथ फोटो खिंचवाने वाले पर्यटक इसकी शान समझते हैं।

ट्रैक्टर देखने आने वाले पर्यटक कस्बे में खरीदारी भी करते हैं। इसके साथ कपड़े की कढ़ाई वाली शर्ट, स्कार्फ, मफलर और टोपी आदि बेचने वाले स्थानीय लोगों के व्यवसाय को बढ़ावा मिला है।

खरीफ उत्पादन पर अत्याधिक बारिश का प्रभाव मामूली - क्रिसिल

रेटिंग एजेंसी क्रिसिल ने कहा कि प्रमुख खरीफ फसल उत्पादक राज्यों में अत्यधिक मानसूनी वर्षा ने धान और दालों सहित खड़ी फसलों को प्रभावित किया है, लेकिन देश के फसल उत्पादन पर इसका समग्र प्रभाव बहुत अधिक होने की उम्मीद नहीं है।

क्रिसिल के वर्षा विरूपण सूचकांक (आरडीआई) के अनुसार, "अगर कोई प्रतिकूल मौसम की स्थिति नहीं बनती है और आगामी रबी सीजन स्वस्थ रहता है, तो हम लगातार तीसरी बार सफल फसल देखेंगे।"

एजेंसी ने कहा कि इस मानसून सीजन में हुई भरपूर बारिश ने भूजल और जलाशयों के स्तर में सुधार किया है, जो सिंचाई पर निर्भर रबी फसलों के लिए फायदेमंद है। इसने कहा कि अत्यधिक मानसूनी वर्षा ने 10 राज्यों में फसलों को प्रभावित किया है, जो कुल मिलाकर भारत के खरीफ उत्पादन क्षेत्र का 58 प्रतिशत हिस्सा हैं।

सूचकांक में कहा गया है कि अक्तूबर के मध्य तक, जब मानसून वापस चला गया, पूरे भारत में वर्षा मानक - दीर्घावधि औसत (एलपीए) से 27 प्रतिशत अधिक थी। फिर भी, प्रमुख खरीफ फसल उत्पादक राज्यों पंजाब (478 प्रतिशत), हरियाणा (390 प्रतिशत), राजस्थान (371 प्रतिशत), बिहार (190 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (90 प्रतिशत), गुजरात (75 प्रतिशत), पश्चिम बंगाल (56 प्रतिशत), ओडिशा (49 प्रतिशत) और मध्य प्रदेश (32 प्रतिशत) में अत्यधिक से लेकर बहुत अधिक बारिश दर्ज की गई।

क्रिसिल ने कहा, "अक्तूबर महत्वपूर्ण है क्योंकि खड़ी खरीफ फसलें आमतौर पर कटाई के अंतिम चरण में होती हैं। इसके अलावा, रबी की बुवाई की तैयारी के लिए कृषि भूमि को नमी कम करने की आवश्यकता होती है।"

यह सूचकांक तनावग्रस्त क्षेत्रों को उजागर करता है, जैसा कि इस मौसम में अत्यधिक वर्षा के स्थानिक पैटर्न से संकेत मिलता है।

2025 के दक्षिण-पश्चिम मानसून मौसम के लिए, आरडीआई, जो खरीफ उत्पादक क्षेत्रों में अधिक या कम वर्षा की सीमा को मापता है, 18.7 है, जो 14 वर्षों में उच्चतम (सकारात्मक) मान है, जबकि 2024 में यह 17.9 था और पांच वर्षों का औसत 9.9 था।

सूचकांक के अनुसार, "इससे पता चलता है कि इस साल खरीफ फसल उगाने वाले राज्यों में मानसून की बारिश ज्यादा रही, जबकि बारिश 14 सालों में सबसे ज्यादा व्यापक रही।"

दक्षिण-पश्चिम मानसून सीजन (जून-सितंबर) देश में सामान्य से ज्यादा बारिश के साथ समाप्त हुआ, जो मानक (दीर्घकालिक औसत) का 108 प्रतिशत था, जबकि 91 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्रों में सामान्य से ज्यादा बारिश दर्ज की गई। 2023 में सामान्य से कम बारिश के बाद, इस साल यह लगातार दूसरा साल है जब मानसून सामान्य से ज्यादा रहा।